परमानन्द प्रवाह

[परमानन्द की कश्मीरी कविताओं का हिन्दी अनुवाद]

संकलन एवं रूपांतर

पृथ्वी नाथ पुष्प

जे० एण्ड के० अकादमी ऑफ़ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, जम्मू

परमानन्द प्रवाह

[परमानन्द की कश्मीरी कविताओं का हिन्दी अनुवाद]

संकलन एवं रूपांतर

पृथ्वी नाथ पुष्प

जे० एण्ड के० अकादमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, जम्मू

सचिव द्वारा जे० एण्ड के० अकादमी आफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, नहर मार्ग, जम्मू के लिए प्रकाशित ।

०

प्रथम संस्करण : 1981

०

०

ब्रोका प्रेस, लाल चौक, श्रीनगर में मुद्रित

मूल्य : 11 - 20 पैसे

PARMANAND PARVAH (Hindi Version of Kashmiri Poems of PARMANAND) Translator : P. N. Pushp.

वक्तव्य

(रूपांतरण के बारे में)

परमानन्द की रचनाओं के संकलित अंश को हिन्दी पद्य में प्रस्तुत करने की लालसा कब से थी। कई बार काम को हाथ में लिया भी, पर अधूरा छोड़ा। विशेषतः इस लिए कि रचनाओं का कोई प्रामाणिक संस्करण नहीं मिला। स्वर्गीय 'मास्टर जी' द्वारा **परमानन्द-सूक्ति-सार** कुछ अधिक संक्षिप्त ही नहो, कई संदर्भों में कटा-फटा भी लगा, अतः पाण्डुलिपियों का सहारा लेकर संकलन की ठान ली और मूल पाठ का निर्धारण करने बैठा। इतने में कलचरल अकडेंमी का आफ़र आया तो नहीं करते न बनी। काम को आगे बढ़ाया और (१६० पृष्ट) की सीमा के अन्दर रहते हुए भी तीन बातों का **विशेष ध्यान रखा** :

१ हिंदी रूपांतर में परमानन्द की तीन प्रमुख रचनाओं (लीला काव्यों) का कथासूत्र भा जुड़ा रहे, और काव्यसौंदर्य की भरपूर झलक भी मिले।

२ रूपांतर का छंदोविधान मूल के निकट रहते हुए भी लचीला रहे और विषयगत विशेषताओं पर अधिक ज़ोर देते हुए भी रचना-शैली के अर्थगौरव का निर्वाह हो पाय।

३ रूपाँतर मूल के अत्यंत निकट रहे, पदलालित्य के प्रलोभन में मूल से दूर न हो जाय, तथा संकलित पद्य को इकाई को अक्षुण्ण रखे। यहाँ तक कि मूल रचना की दुरूहता को भी अनुरूप पदावली में ही प्रस्तुत करे। मूल में प्रयुक्त संस्कृतनिष्ट या फ़ारसी-गर्भित शब्दावली को हिंदी में स्वीकृत देखकर ही रूपाँतर में पचा लिया जाय।

मूल कश्मीरी पाठ देने की सुविधा के अभाव में मूल की बानगी के तौर काव्य के प्रारम्भिक छंद को देना जरूरी समझा गया है और **लीला-गीतों** तथा फुटकर रचनाओं के प्रारम्भिक बोल भी (शीर्षकावली में) दर्ज किये गये हैं ताकि मूल पाठ का संकेत मिल पाय।

कलेवर की दृष्टि से यह ब्यौरा अप्रासंगिक न होगा कि संकलित अंश में (कम से कम)

सुदामचरित का पाँचवां
राधास्वयँवर का सातवाँ, और
शिवलग्न का एक चौथाई भाग समोया गया है।

फुटकर रचनाओं में कोई एक तिहाई को लिया गया है, और संख्या की दृष्टि से तो कम से कम दो तिहाई में से संकलन हुआ है। जिन रचनाओं को संकलन में स्थान नहीं मिल सका उनमें से भी सूक्तियाँ चुन कर **सूक्तिमुक्तावली** में सम्मिलित की गई हैं।

लीलागीतों का छंद नहीं तो, कम से कम तालविधान, मूल का जैसा ही रखने की कोशिश की गई है। हाँ, तुकों को हर क़ीमत पर निभा लेना अनावश्यक ही नहीं अकलात्मक भी माना गया है; अत: कई चरण अतुकांत भी मिलेंगे जो तुकाँत की बेतुकी से बचने की चेतना का ही परिणाम है। सहज रूप से आने वाले अनुप्रास से दामन बचाने की ज़रूरत भी नहीं समझी, बल्कि जहाँ पर मूल की माँग समझी, यमक और श्लेष से भी परहेज़ नहीं की। एक आत्यंतिक उदाहरण के तौर (मूल का) यह चरण लीजिए :

पर्वांन मेलि यस पर्वांन पर्वांन

जिसने कई दिन चक्कर में डाला; पर पूरे पद्य को रास के संदर्भ में संकलनीय समझ कर इस चरण को छोड़ देना उचित भी नहीं जाना। आखिर पूरा पद्य यों बन पड़ा —

"आप पतंगा आग न जारे
चकरा टकरा आ लपके

पर्वाना पर्वाना पा ही जाये तो पर्वा ना रे!"
(: पर्वाने को मर मिटने का पर्वाना मिल जाये तो उसे जल कर राख हो जाने की पर्वाह नहीं।)

परमानन्द ने अपनी रचनाओं में (विशेष कर राधा स्वयंवर में) हिंदी या भाखा के पद्य भी भर दिये हैं जो संदर्भ की दृष्टि से ही नहीं भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। इनकी बानगी यथास्थान दे दी गई है ताकि कश्मीर में राष्ट्रभाषा की ऐतिहासिक बपौती का भी थोड़ा सा परिचय मिल जाय।

आशा है प्रस्तुत रूपांतर कवि परमानंद को पहचानने में सहायक सिद्ध होगा और राष्ट्र की क्षेत्रीय रूपरेखा को भी उभार कर 'एकता में अनेकता' का एक ठोस साहित्यिक - सांस्कृतिक आधार जुटाएगा।

अंत में जम्मू व कश्मीर की कलचरल अकेडमी का आभार प्रकाशित करना चाहता हूं कि परमानन्द की रचनाओं के इस रूपाँतर को अपनी प्रकाशन - योजना में स्थान दिया।

जम्मू :
21 मार्च, '79

पृथ्वीनाथ पुष्प

भूमिका

परमानन्द (1791—1879 ई०) कश्मीरी भाषा के उन विलक्षण कवियों में से हैं जिनकी रचनाएं सचमुच अनुपम हैं, कथ्य में भी, कथन में भी। धर्म और अध्यात्म के परम्परागत विषयों को लेकर भी इस कवि ने ध्वनिचित्रण और रूपक - प्रक्रिया के बलबूते पर सृजन की एक मौलिक उद्भावना की।

परमानन्द का असली नाम नंदराम था। मां का नाम था सरस्वती, बाप का नाम कृष्ण पंडित। जन्म मट्टन (मार्तण्ड) में हुआ था जहां इनके पिता पटवारी थे। कृष्ण पंडित का अपना गाँव सीर था जो पहलगाम के रास्ते (मट्टन से कोई चार किलोमीटर) है।

नंदराम ने कश्मीर पर तीन सत्ताओं का शासन देखा। ई० 1819 तक अफ़ग़ानों का; 1819 से 1846 ई० तक सिक्खों का; और 1846 के बाद डोगरों का; 1816 ई० में जब वह पिता की मृत्यु पर पटवारी बना तो अफ़ग़ान दौर समाप्त हो रहा था और पठान हाकिमों की शोषणचर्या खुल खेल रही थी। तीन वर्ष बाद सिक्खों का दौर शुरू हुआ तो शोषण का स्वत्व भी उन्हीं के हाथ आया। शोषण के कुचक्र को देख कर नंदराम का मन विरक्त हो गया और पटवारी के पद को त्याग कर वह अध्यात्म - साधना में लगा रहा।

नंदराम की शिक्षादीक्षा उन दिनों की प्रथा के अनुसार घर पर तथा मकतब में हुई। घर पर अपने पिता से संस्कृत और फ़ारसी दोनों की प्रारम्भिक जानकारी पाई और फिर मकतब में फ़ारसी में योग्यता बढ़ाकर पटवारी बनने की तैयारी की। फ़ारसी में कामचलाऊ योग्यता प्राप्त करके उसने स्वयं ही तसव्वुफ और वेदान्ती रहस्यवाद

पर ग्रन्थ पढ़े। फ़ारसी उन दिनों दफतर ही की नहीं, संस्कृति की भी भाषा थी। यहां तक कि कर्मकाण्ड, ज्योतिष और दर्शनशास्त्र भी प्रायः इसी भाषा के माध्यम से सीखे सिखलाये जाते। इन सभी विषयों पर फ़ारसी पुस्तिकाएं सुलभ थीं। रामायण, महाभारत और गीता के अतिरिक्त उपनिषद्, योगवासिष्ट, भागवत और शिवपुराण भी फ़ारसी में पढ़े जाते थे। नन्दराम ने भी इस सुविधा से लाभ उठाया होगा। संस्कृत भाषा से तो उसका परिचय बहुत ऊपरी मालूम होता है।

संगीत से उसका गहरा लगाव था। गला सुरीला पाया था। मदहम (कश्मीरी सितार) खूब बजाता था।

नंदराम का विवाह जिस लड़की के साथ हुआ था वह भी एक पटवार घराने की लड़की थी। नंदराम से उसे जिस व्यवहार-कुशलता की अपेक्षा थी वह उस (नंदराम) की प्रवृत्ति के अनुकूल न थी। अतः मियां-बीवी में ले—दे और तू—तू मैं—मैं होती रहती। यहां तक कि 'पटवारी की बेटी' (मालद्यद) निकम्मे पटवारी-पुत्र (नंदराम) की उपेक्षा ही नहीं, अवहेलना भी करने लगी। तथापि नंदराम गृहस्थ की गाड़ी को ज्यों त्यों ठेलते ही चले। मालद्यद से चार बच्चे हुए, दो बेटे और दो बेटियाँ। दोनों बेटे बाप के जीते जी चल बसे। छोटा छुटपन में और बड़ा विवाह के तुरंत बाद। मालद्यद के आग्रह पर बड़ी लड़की के बेटे (मानपंडित) को गोद लिया, पर विधवा बहू की व्यथा ने चैन का साँस नहीं लेने दिया। शासन की धाँधला और घर के संकट में नंदराम को अध्यात्मचिंतन ही का सहारा रहा। अध्यातम-साधना के कारण ही बाद में वह परमानन्द कहलाये और उनके कई श्रद्धालु संगी साथी उनकी देखभाल करने लगे। इन्हीं में से एक था सालेह गनाई जो मट्टन का मुक़द्दम था। नंदराम का अफ़सर होते हुए भी वह परमानंद का आस्थावान सेवक था और मुसलमान होते हुए भी वह वेदान्ती अध्यातम का सच्चा पारखी थी। दाराशिकोह के उपनिखत (सिर्रेअकबर) और जोगबासिश्ट का उसने गहरा अध्ययन किया था।

अध्यातम का ओर नंदराम का मन छुटपन ही से झुका था।

अपने पिता कृष्ण पंडित से उन्होंने दीक्षा भी ली थी। बाद मैं योगियों के सम्पर्क में आकर योगसाधना भी करने लगे थे। अध्यात्म साधना की कई मंज़िले तय करके आख़िर वे उस अवस्था को पहुंचे जिसे उन्होंने अपने गीतों में सहजविचार का नाम दिया है।

वैसे भी मट्टन के प्रसिद्ध तीर्थ पर पर्व-त्यौहार मनाये जाते तो साधओं-संतों की भीड़ लगी रहती। अमरनाथ-यात्रा के दिनों तो वहां एक अखिल-भारतीय समाँ बंध जाता। जिधर आंख उठे नांगे-बैरागी, जोगी-जंगम, साधु-संत नज़र आते। सत्संग की मंडलियों में गहमागहमी रहती। भजन-कीर्तन, भागवत-कथा, शास्त्र-चर्चा, गुरु-ग्रंथ पाठ, व्याख्या-प्रवचन आदि में नंदराम भी शामिल हो जाते और अपनी अपेक्षा के अनुसार प्रभाव ग्रहण करते।

राधास्वयंवर में गुरुवाणी का उद्धरण (पृ० 88) यों आता है:

"एक लाख भूत सवा लाख नाती
जिस रावन गर दीवा न बाती"

और इसे जोड़ा गया है कसवध के प्रसंग से:

"क्या फल पाया कमसासुर ने?"

स्पष्ट है, इन सत्संगों पर ही परमानंद ने हिंदी का वह मिला जुला रूप ग्रहण किया जिसमें उन्होंने स्वयं भी पंजाबी, डोगरी और कई अन्य बोलियों के पैवंद लगाये। यही उनकी दृष्टि में भाखा का भाखापन था (पृ० 57, 59, 60, 65, 88, 93)। आश्चर्य की बात है कि तुलसी के **रामचरितमानस** का परमानन्द पर कोई विशेष प्रभाव नहीं जान पड़ता।

इसी प्रकार सूफ़ी समागम और लोक-उर्स (संतों की ज़ियारत के मेले) परमानंद के लिए रोचक रहते। ऐसे ही असाम्प्रदायिक वातावरण में साँस लेकर वे नन्दराम से परमानंद बन पाये थे। मसनवी रचना से शुरू करके लीला-काव्य के सृजन तक उन्होंने जो मोड़ तै किये हैं उन पर इन सभी लोक-समागमों की छाप खोजी

जा सकती है। परमानन्द के शिष्यों में कृष्णदास और लक्ष्मन बठ ने भी कविता की, जिस पर परमानन्द की छाप स्पष्ट है।

परमानन्द की रचनाओं में प्रगीत और चरितकाव्य की जो दो विशेष विधाएं मिलती हैं उनकी परम्परा बहुत पुरानी है। कश्मीर के संस्कृत साहित्य में यह परम्परा जीवंत थी ही, प्राकृत और अपभ्रंश में भी अवश्य सजीव रही होगी, जभी तो कश्मीरी भाषा के प्रथम प्रबंधकाव्य बानासुरकथा (15वीं शती) में इन दोनों का मनोरम तालमेल सुनाई पड़ता है। इस काव्य में भट्टावतार ने कृष्णबाणासुर। युद्ध के आख्यान में उषा और अनिरुद्ध के अनुराग की गाथा गाई है। इससे पूर्व शितिकंठ (13 वीं शती)' ने अपने महानयप्रकाश में कश्मीर की 'सर्वगोचर देशभाषा' का आश्रय लेकर जो नुतियां रचीं थीं उनमें अध्यात्मरहस्य पर प्रकाश तो डाला गया है, पर अध्यात्म के भावपक्ष की कोई झलक नहीं दिखाई गई।

यह महत्त्वपूर्ण काम थोड़े ही समय बाद ललदद्यद (14वीं शती अन्त) ने अपने वाकों द्वारा किया। ललद्यद की वाणी में अध्यात्म के विवेक, विबोध और उल्लास के भावभीने राग पहली बार फूट पड़े कुछ हद तक यह काम नुंदऋषि (शेख़ नूरुद्दीन) ने भी लल्ला से प्रभावित होकर किया। चौदहवीं-पन्द्रहवीं शती के इस संत ने अपने छन्दों (श्लोकों) में मानव के नैतिक और आध्यात्मक सामंजस्य की रागिनी सुनाई और अध्यात्म के व्यावहारिक सौष्टव पर ज़ोर दिया। ललद्यद और नुन्दऋषि की यह अमर वाणी परमानंद तक भी आ पहुंची थी और थाती बन कर परमानंद के अंतस्तल में गूंज उठी थी। यहाँ पर इन वाकों और श्रुकों से कुछ एक का रूपांतर देना उपयुक्त जान पड़ता है ताकि परमानद की रचनाओं में इनकी प्रतिध्वनि को पहचान लेने में सुविधा रहे और परमानद के सहजबोध की परम्परागत पृष्टभूमि भी स्पष्ट हो जाय।

"कच्चे धागे से सागर में खेती हूं मैं नैया रे
टेर दई सुन ले मेरी पहुंचा ही दे उस पार मुझे
कच्ची माटी को थलिया मे पानी ज्यों पच जाती हूं
जियरा मेरा रह रह मचले घर जाती मैं घर जाती।"

O

"देव हैं पत्थर देवर पत्थर
पत्थर ही ऊपर नीचे
पूजेगा किसको रे होता
मन को श्वास से गर्मा ले"

O

"शिव हो केशव हो जिन हो या
कमलजनाथनामा ही हो
मुझ अबला को भव–रुज नाशे
वो या वो या वो या वो।"

O

"शून्य - पसारा पार किया तो
लल (मैं) सुधबुध खो बैठी
परिचय अपना हो पाया जो
लल कल से पंकज विकसी!"

O

"जो जो काम किया अर्चन रे
मंत्र कि जो भी उच्चारा
तन का परिचय पाया मैंने
तत्र यही परमेश्वर का।"

G

कमलजनायनामा : ब्रह्मा कल : लगन

नुंद श्रुक से :

"बेग़र्ज़ी से तुझे पुकारे
निर्मल किसका इतना मन
जन्नत मांगे डरे नरक से
जभी करे तेरा अर्चन ! "

O

"इस पथ कौल कहाँ जाएगा
तज बीवी - बच्चे गृहद्वार
पाप - भार किस पर लादेगा
बार ख़ुदाया पाप निवार।"

O

"हाड़ में आंख लगी पोह आया
काम का दिन एक भी न रहा
जागा जब उठना दूभर था
जम आया, 'चल रे' बोला'।"

O

"पास वो मेरे पास मैं उसके
पास उसी के जी ठहरा
नाहक़ ढूँड़ा परदेस उसे
देश अपने ही यार मिला।"

O

"मन—दर्पन से ज़ंग हटा ले
तो साजन को पहचाने
घुटे घुटे अरमान हैं तेरे
ज्ञान है— 'मर मृत्यु से पहले' !"

O

अध्यात्म गीतों के अतिरिक्त वेदनागीत भी परमानन्द तक आ पहुंचे थे जो कश्मीरी को हब खोतन (16 वीं शती) और अरिनिमाल (18 वीं शती) ने विशेष रूप से दिये हैं। हब खोतन ने कश्मीरी गीतिकाव्य की जिस नई विधा को विकसित किया उसमे आत्मनिवेदन की मार्मिक कचोट और उद्गार की करुण संगीतमयता वैसी ही विशेष थी जैसी ललद्यद के वाकों में तीव्रता, स्पष्टवादिता और दर्शनगंभीरता।

इसी प्रकार अरिण्मिमाल के करुण - मधुर गीतों में बिछोह के विह्वल स्पंदन और प्रतीक्षा तथा उत्कंठा के आतुर स्वर झंकृत हो उठे हैं।

गीतिकाव्य की परम्परा कितनी जीवित रही होगी इसका अन्दाज़ा **सूफ़ियाना कलाम** (कश्मीरी मौसीक़ी) संहिता—ग्रंथों से हो सकता है। बाद में यह स्वर 19 वीं शती के **मसनवी** काव्य में भी फूट पड़ा। उससे पहले 18 वीं शती की लोक-कविता में इसने रहस्यवाद का आश्रय लेकर एक बिल्कुल नई विधा को बल दिया जिसके नमूने **नयिहुंज़ कथ** और '**ग्रोस्त्य्‌बाय** त **माछतुलुर** में मिलते हैं।

नयिहुज़ कथ (कहानी बाँसुरी की) में बांस का टुकड़ा बांसुरी बनकर यों पुकार उठता है—

"चाहता हूं कि साथियों को दुखड़ा सुनाऊं
सीना चाक कर अपना दर्द दिखाऊं
नैस्तां कितना प्यारा है मेरा
अनजान उसकी क्या जाने महिमा
जाने वही जो अनिकेत हो पाए !"

स्पष्ट है कि परमात्मा से जोवात्मा के बिछोह का यह संकेत **फ़ारसी** के रहस्यवादी कवि रूमी की **मसनवी** से प्रभावित है। रहस्यवाद की यह थाती भी परमानंद को अवश्य मिली थी।

18 वीं शती ही की एक और रचना है **ग्रोस्त्य्‌बाय** त **मांछतुलुर** (किसान - पत्नी और मधुमक्खी) जो ठेठ किसानी रंग में रंगा रहस्य-रूपक है। परमानंद की रचनाओं में इसका सीधा प्रभाव न सही तिरछा प्रतिबिम्ब अवश्य मिलता है। विशेष कर वहां जहां इन्होंने भी किसानी जीवन के ततुओं से रूपक बांधे हैं। मधुमक्खी के शोषण की कहानी सुनकर किसानपत्नी भी अपना दुखड़ा सुनाती है —

"वसंत को जो मुतस्सद आगए ढारस बंधाने
चाटुकारी से हमारा पेट भर दिया, झाँसे में हम आए
खलिहान में ढेर लगा दिए मैंने; खरवार सैंकडों निकले
चप्पे चप्पे पटवारी औ' मुक़द्दम तोलने आ धमके
बेबस नादार कितने ही सखि, आंचल पसारते आ पहुंचे
आँचल भर दिए मैंने उनके; मुक्ति का मार्ग तो यही है री !"

परमानन्द की रचनाओं में आप को किसानी जीवन की विसंगतियों का जो रूपकात्मक चित्रण मिलेगा, उसकी तह में सामंती दौर की व्यापक मनोवृत्ति का विडंवन भी दिखाई देगा। वह यह कि ईश्वरी सत्ता को भी सामंतशाहीं व्यवस्था के साँचे में ढलना पड़ता है। शासकों का शासक जो ठहरा; मालिकों का मालिक; सब से बड़ा जागीरदार"

"शक्तिपात के शहर का सूबेदार" (पृ० 129)
" जागीरदार वंचित न रहे" (पृ० 135)
"पांच-तीन भागी बंधन में वादे से ज़्यादा कम क्या?" (पृ० 136)

प्रबंध काव्य का जो रूप **बाणासुरकथा** में खिल उठा है वह अपभ्रंश परम्परा से प्रभावित हो कर भी साहित्यिक आग्रह लिए हुए जान पड़ता है। पर जिस बडशाह जैन उल आबदीन (15 वीं शती) ने भट्टावतार को ऐसा कश्मीरी काव्य रचने की प्रेरणा की थी उसी के राज्यकाल में फ़ारसी सरकारी ज़बान के रूप में पूरी तरह प्रतिष्ठित हुई और मध्यएशिया आदि पड़ोसियों के साथ साँस्कृतिक सम्पर्क का सजीव माध्यम भी बन गई। स्वाभाविक था कि कश्मीरी साहित्य भी फ़ारसी भाषा तथा साहित्य से उत्तरोत्तर प्रभावित होता जाए। फिर भी लोकसाहित्य में परम्परागत रूप ही निखरता चला जैसे कि **अकनन्दुन** के लोकाख्यान पर रचे गए काव्यों में। इनमें प्रायः दास्तान-गोई के घेरे में प्रगीत की शैली ही अपनाई जाती रही, विशेष कर **वनवुन** (संस्कार गीत) की शैली।

लोक शैली से प्रभावित होकर जो प्रबन्धकाव्य रचे गए उनमें से केवल एक ही हम तक आ पहुंचा है। वह है साहिब कौल (17 वीं शती) का **कृष्णावतार**। **लीला** - काव्य की विधा संभवत: इसी से चल पड़ी और राम, कृष्ण तथा शिव पर इस शैली में कई चरित - काव्य लिखे गए होंगे। साहिब कौल की इस रचना का कृष्ण - सुदामा प्रसँग काफी आकर्षक है। परमानंद ने इसे अवश्य सुना होगा क्योंकि मट्टन में शादी - ब्याह समारोह पर यह लीला भी गाई जाती थी।

पर इसके बाद बहुत देरतक इस तरह का कोई और प्रबंध काव्य देखने में नहीं आता। फ़ारसी शैली से प्रभावित कोई प्रबंध रचना भी 19 वीं शती से पहले की नहीं मिलती। 19 वीं शती के प्रारंभ में **महमूद गामी** ने **निज़ामी** के **पंजगँज** को कश्मीरी जामा पहना कर **शीरी खुसरो, लैला मजनून** और **यूसुफ ज़ुलोखा** जैसी रचनाओं में कश्मीरी काव्य को फ़ारसी मसनवी की डगर पर डाल दिया। जायसी की पद्मावत की तरह इन काव्यों का उद्देश्य लौकिक प्रेम में आध्यात्मिक की उद्भावना है, इश्के मजाज़ी में इश्के हक़ीक़ी की तरजुमानी है।

मसनवी की यह शैला इतनो लोकप्रिय हुई कि **प्रकाशराम** ने कश्मीरी का प्रथम रामायण, प्रकाश—रामायण (1840 ई० के आसपास) इसी शैली में मसनवी ही की बहर में रचा। **शाहनामे** का कश्मोरी रूप भी इन्ही दिनों तैयार हुआ औरफ़ारसी के कई और प्रबंधकाव्य भी कश्मीरी में अनूदित हुए। पर **वहाब परे** का शाहनामा मात्र अनुवाद नहीं, कई बातों में एक स्वतन्त्र रचना है, विशेष कर जंगों के वर्णन में और अपने समय की छाप उभारने में। वहाव के बाद भी कई जंगनामे लिखे गए, जिनमें से **खैबरनामा** और **सामनामा** काफी लोकप्रिय हो चुके हैं। एक सामनामा तो परमानन्द के मेधावी शिष्य **लक्षमन** बठ नागामी ने भी लिखा है। जंगनामों के अतिरिक्त इन दिनों **मर्सिये** भी लिखे गए जिनमें कर्बला की हृदयविदारक दुर्घटना

पर वेदनापूर्ण उद्‌गार व्यक्त किए गए। पर मर्सियों की शैली पुरानी हो रही, मसनवी से प्रभावित न हुई।

परमानन्द के एक सहयोगी **मक़बूल क्रालवारी** ने **गुलरेज़** जैसी अद्वितीय मसनवी के अतिरिक्त व्यंग्य विनोद की शैली मे **ग्रीस्त्यनामा** और **मलानामा** नाम की मसनवियाँ भी लिखीं जिनमें किसान, मुल्ला और हाकिमशाही कारिंदों की खिल्ली उड़ाई गई है।

इन मसनवी काव्यों की एक बड़ी विशेषता यह है कि इन में भावोद्रेक की अभिव्यक्ति प्रायः प्रगीत में की गई है। इस प्रकार की प्रगीतात्मक रचना को कश्मीरी में ग़ज़ल का नाम दिया गया है, हालाँकि इसको रचनाशैलो फ़ारसी - उर्दू ग़जल की अपेक्षा हिन्दुस्तानी गीत के अधिक निकट है। हां, **रसूलमीर** की कई ग़ज़लें रचना की दृष्टि से फ़ारसी ग़ज़ल की याद दिलाती हैं। रसुलमीर ही वह कवि है जिसने अपने उस्ताद महमूद गामी की रहस्योन्मुखता का मोह छोड़कर शुद्ध लौकिक प्रेम की मांसल अभिव्यक्ति को अपना ध्येय बनाया।

ग़ज़लों के अतिरिक्त इस काल में धार्मिक विनयगीत भी लिखे गए। एक ओर शिव-पार्वती, राधा-कृष्ण तथा गणेश आदि के भजन-कीर्तन और लीला-गीत रचे गए, तो दूसरी ओर हज़रत मुहम्मद की शान में **नातें** कही गईं और **मेराजनामे** लिखे गए। रूहानी बुजर्गों के प्रति निवेदनगीत या **मन क़िबतें** भी रची गइं।

इस प्रकार परमानन्द के सामने प्रबन्धकाव्य और प्रगीतकाव्य की कई रूपविधाएं थीं जिनसे प्रेरित या प्रभावित होकर वे अपनी रचना कर सकते थे, पर उन्होंने लीला - शैली ही को अपना कर एक नया रूप दिया, प्रबन्ध में भी, प्रगीत में भी। शुरू शुरू में संभवतः मसनवी की बहर को भी अपना लिया होगा, जैसा कि **पटवार बही** पर लिखी गई इनकी एक छोटी रचना से या **शबरी - गाथा** से जान पड़ता है। **पटवारवही** में परमानन्द (या नन्दराम ?) ने राधूमल

मिश्र जैसे निर्दय अधिकारी पर चोट की है और पटवारियों की दुर्दशा को बड़े कौशल से संकेतित किया है। इस रचना का हिंदी रूपांतर (अंशतः) कुछ इस प्रकार हो सकता है:

"मिस्रा बेनुक्ता राधू
बिपता पर अब है बिपतू
वोलूर में बैठे बैठे
भिड़—छत्ता सा आ फूटे
मट्टन इच्छा थी उसकी
पटवारी मन्साने की
चारों दिशि ही खोज लगी
कहिए कैसी बही रही
कभी नहीं जो हुई सही।"

(बेनुक्ता मिस्त्र: १ पद्य का वह चरण जिसमें कोई बिंदी न लगे।
२ बेलगाम (आततायी) राधूमल मिश्र।)

शबरी-गाथा में रामायण का एक प्रसंग मसनवी की बहर में बांधा गया है और एकादश स्कंद की ओर जो इशारा इसमें मिलता है उससे जान पड़ता है कि रामायण की गाथा छेड़ते ही इन्हें भागवत की ओर जाने की प्रेरणा हुई और बाद में उन्होंने भागवत को ही अपने दो लीलाकाव्यों का आधार बनाया। मसनवी की बहर ही में लिखी गई **दीनाक्रंदन** और **तरु-छाया-झगड़ा** रचनाएं बहुत बाद की लिखी जान पड़ती हैं।

पटवारी दौर की इनकी एक और कविता है जिसमें इन्होंने अपने जीवन की हर दुखद घटना से उत्प्रेरित होकर मुरारी से विनय की है। ग्रीष्म की चिलचिलाती धूप में इन्हे अपने अफ़सर के लिए भेड़ की पीठ पर ढोना पड़ा था। 'त्राहि माम् त्राहे पाहे मुरारी' शीर्षकवाली यह रचना (पृ० 138) सम्भवतः प्रारम्भिक (नन्दरामी) दौर की है।

दुख की बात है कि नन्दराम की अधिक प्रारम्भिक रचनाएं परमानन्द के काव्य संग्रहों की पाण्डुलिपियों से बाहर रह गई

हैं। मौलिक रूप से जो टुकड़े अभी भी सुने जा सकते हैं उनकी सगति बिठाना बहुत कठिन हो गया है।

अस्तु, परमानन्द की रचनाओं को तीन वर्गों मे बाँटा जा सकता है—

1 **लीला (प्रबँध) काव्य :** तीन

1. सुदामचरित (लगभग 250 छन्द) [संक्षिप्त परिचय के लिए देखिए परिशिष्ट 1]
2. राधास्वयम्दर (लगभग 1400 छन्द)
3. शिवलग्न (लगभग 380 छन्द)

2 **लघुकाव्य** (पांच)

1 मसनवी

1. आत्मनिवेदनात्मक	जैसे	**दोनाक्रँदन और पटवार बही**
2. पौराणिक (आख्यानात्मक)	जैसे	**शवरी गाथा**
3. रूपकात्मक	जैसे	**तरुछाया झगड़ा**

2 लीला कविता जैसे **अमरनाथयात्रा लोला**

3 **फुटकर प्रगीत :** (लगभग तीस)

1. विवेकप्रधान (गीत)	जैसे	**सहज विचार**
2. भक्तिभाव प्रधान (गीत)	जैसे	**उठो सहियो**
3. उपदेश प्रधान (गीत)	जैमे	**कर्म भूमिका**
4. आत्मानुभूति प्रधान (गीत)	जैसे	सोऽहँ बोध
5. आराधनप्रधान (गीत)	जैसे	पाहि मुरारी

हिन्दी रूपांतर के संदर्भ में परमानन्द की भाषा के बारे में इतना ही बताना काफ़ी होगा कि यमक—अनुप्रास की भरमार के बावजूद परमानन्द का पद पद इनको प्रतिभा के इशारे पर वैस ही नाचता दिखाई देता है जैस बीन की धुन पर सांप। इनकी संस्कृत बहुलता स खोझ उठने वाले पाठक भूल जाते हैं कि प्रसंग को सर्जनात्मक अपेक्षा के अनुसार ही इन्होंने संस्कृतप्रधान, फ़ारसी-ग्रामेज या ठेठ कश्मीरी शब्दावली का चुनाव किया है। प्राय: प्रयोग अवसरानुकूल हैं। हां, यमक के अत्यधिक मोह को इनकी एक सोमा मानना ही समीचीन होगा।

पृथ्वीनाथ पुष्प

जय जय जय

देवकीनंदन

हे

(सुदामचरित से)

मूल कश्मीरी की बानगी

गटि मंज़' गाश आव
चाने ज़्य़नय
जय जय जय
दीवकीनन्दनय ।

नीति - शक्ति सू'त्य छुख
नानारू'पय
खीरु'-समो'द्र' मंज़'
श्वेत दू'पय
वसुदीवम्वख' बे'यि
संकरषणय
जय जय जय
दीवकीनन्दनय !

जय देवकीनन्दन

(1)

घटाटोप में हुआ उजाला
जन्म से तेरे
जय जय जय देवकीनन्दन हे !

नीति - शक्ति से नानामय तू
क्षीरोदधि में श्वेतद्वीप पर
वासुदेव तू संकर्षण तू
जय जय जय देवकीनन्दन हे !

तू प्रद्युम्न अनिरुद्ध निर्मल तू
शुद्धबुद्ध विधि शुभमंगल तू
जन न निरञ्जन चीन्हें तुझको
जय जय जय देवकीनन्दन हे !

●

(2)

देशकाल से मुक्त
देश से निकला तू
मन न तुझे पकड़े
पर पास है अपना तू
जसुदा ने बरसाए
तुझ पर फूल बहुत!
जय जय.........

गोद गोद दुलराएं
तुझ को प्यार करें
भाव चाव से कान्ह पुकारें
माखनचोर कहें
लाड़-प्यार से नैन-पालने
तुझे झुलाएँ रे।
जय जय.........

गोपपत्नियाँ देने आईं
पुत्र-बधाई जसुदा का
देख देख बोलीं 'चिर जोवे'
देखने आईं कान्हा को
सखी सहेली दासी कोई
फूली नहीं समाई।
जय जय........

बाल-लीला

(1)

भोला ललुवा घुटनों सरके
दूध दही इत उत छीने
गोपपत्नियाँ चार ओर से
जसुमति माँ को आ धमकें
मेरे मेरे मेरे भी
बासन तोड़े इसने !
जय जय·········

जसुमति सोचे, हाय मुझे
यह छोरा निन्दवाए
लोग - लुगाइन के आगे तो
मेरी नाक कटे
मेरे बड़ - पेटे बेटे का
पेट न भर पाए !
जय जय·········

(2)

दूध पिया जसुदा का कान्हा ने
तो जा भागा
पीछा करती दौड़ी उसका
भोली माँ घबरा
हाथ लिए **गो-दाम** कि बाँधूं
हाथ आए कान्हा !
जय जय……

मूर्तिकार जिसकी आकृति को
घेर न पाए
बांधे वही कि जिसके मन में
दुई नहीं रे
बांध न कोई पाए
मात्र ज्ञान-ध्यान से ।
जय जय……

जिस नटखट का पीछा करती
जसुदा दौड़ी
वह ललुवा छलबल भागे
हारी महतारी
आँगन सौ सौ चक्कर काटे
कब तक कोई ?
जय जय ……

गो-दाम : गाय या बच्छे को बांध रखने के लिए रस्सी का टुकड़ा.

थकी बहुत मां तो

दिल भर आया बेटे का

देख पीर भक्तों की

ज्यों प्रभु का भर आता

किया समर्पण निज को

मां- आगे जा ठहरा।

जय जय ·· ····

बाँधा जो गो-दाम तो

देखा नाकाफ़ी था

बंध भी जाता कैसे जो

ब्रह्मांड—अखंड—अच्छिन्न—

चराचर—कौस्तुभ—त्रोटक—

मणिधारी था !

जय णय·········

कितने ही गो-दाम परस्पर

जोड़ थकी वह

गिनती कौन करे कितने ही

जुड़े कि फिर भी

बार बार उतना ही टुकड़ा

कम रह जाता !

जय जय ···· ··

●

(3)

गगंजी भोजन करने बैठे
    तो आचमन लगे करने
ललुबा बार बार आजाए
    मिला भोग अपना चखने
ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्
    उच्चारण ज्यों ही करते।
        जय जय........

नानाकार, नानाधार,
नानामुख, नानाविस्तार,
नारद भी देख करे अर्चन
सर्वाश्रय हे, सर्वाभय हे
अद्वय, अव्यय हे, अरूप हे,
अच्युत, अमृत, अलक्षण हे!
        जय जय .....

विष्णु—सहस्रनाम न जानूं
जो जप जप तुझको पूजूं
मुट्ठीभर ले आया चौकर
दीन सुदामा हूं
    लोकलाज से आज सामने
    तेरे पानी पानी!
        जय जय.......

लीला (गीत) १

मन में भक्त के श्रद्धा न रहे
दे न दई जिस से मांगे !
कौन दैव को समझ सके रे
कौन कह सका भेद किसे
बीच भँवर भी नया खे दे।
दे न दई ·······

अनुग्रह अनुभवरूप बने भी
नयनहीन को दीप से क्या
देखे वही जिसे आँखें दे।
दे न दई········

जेब का खोए जिसे नहीं दे
संचित नहीं अभागे का
अन्न पकाए पके न उसके।
दे न दई ·······

परमानन्द सुदामा की कह
घुनहत तरु में अंकुर ला
शरद् को ठिठुरन में फूल खिले।
दे न पई········

मूल : यियि क्रति बख़्तिस मनि मंज़ बाव·· ··

मीत सुदामा

भीत सुदामा जीव था
प्यारा नारायण का
बालभाव और यौवन
न्यारा नारायण का
आपस में घुलमिल घनिष्ठ थे
भेद नहीं था।

जय जय ··· ···

बालभाव से छिपा छिपा
मुट्ठीभर चौर - चबैना रख के
स्वयं चबाते और चबाकर
मुख से मुख में अर्पण करते
क्षणभर विलग नहीं हो जाते
खाना पीना बेशक तजते।

जय जय ····· .

जीव : 1. -जी : 2. जीवात्मा .

मनमुटाव

एक दिवस का बात
कि भूखे रहे कन्हैया
अपना चौर - चबैना
कुछ भी शेष नहीं था
माँग रहे थे मीत सुदामा से
थोड़ा सा।
जय जय………

चोरी छपे सुदामा खाए
कहे—'नहीं कुछ भी है भैया'
खाली हाथ कान्ह ने देखी
दूर से बालसखा की लीला
आस न पूरे, शापित निंदित
निर्धन द्विज विपता का मारा।
जय जय………

अपनी अपनी राह चले फिर
दोनों अलग अलग से
अपने साथ रही दोनों की
अपनी अपनी ले - दे
आन पड़ी जब तक बेला
संकट - निपटारे की रे।
जय जय………

विपता

सुधा सुदामा को विष - दूषित
हुई भाग्य - परिवर्तन से
लेके मोल स्वयं पीने ही पड़े
घूंट इस बिपता के
क्षीणदीन हो गया कि उसके
गले न यह कड़ुआ उतरे।
जय जय……

शृंग न्यास हो गया अचानक
उसके घर का
उसके जीवन - पारिजात की
टूटी शाखा
मुर्झा गया कि बेबस
घर घर मांगे भिक्षा।
जय जय……

शृंग : (भवन का) सबसे ऊपरला भाग .
न्यास : सबसे निचला भाग (आधार) .

बच्चे किसके कुंबा किसका
दिन किसके और रातें किसकी
हुई सुशीला भी अति व्याकुल
विपदा की मारी मुर्झाई
आपस में तो कहा सुनी भी
रही न थो उनकी बिल्कुल ही।
जय जय.........

अपने ही दारिद्र्य भंवर में
उलझा हुआ निढाल सुदामा
विपता की आंधी में
डगमग नौका
कैसे पार लगाता
अभी कहाँ अनुग्रह का रस्सा
पाया था जो
तट ले आता।
जय जय........

•

अनुग्रह

(1)

मन में अनुभव
सहज ही उपजा
अन्तर्यामी श्रीनारायण
प्रेरित करने लगा
जो क्षण क्षण
शुभ परिवर्तन।
जय जय······

क्यों न चला जाऊं मैं उस जा
है कान्ह जहां
जाकर गले लगालूं
अपने बाल-सखा को
रंच न उससे माँगूं
सब कुछ जाने है
प्रिय मीत मेरा।

जय जय········

(2)

मन में चाहा
स्वयं बता दे पत्नी ही
इतने में भार्या
प्रेरित - सी बोली भो
आलाप में आलाप मिला
वाणी निकली ।
जय जय ·······

'जाते पास उनके
विपता मिट ही जाती
देना होगा कुछ
देंगें बिन माँगे ही
पूंजी उनकी
बंट बंट कर भी भरी - पुरी ।'
जय जय ·· ·· ··

बोला भार्या से,
'सुन ले री, सुन ले री
मीत एक ही मेरा
जाऊं पास सही
री खाली हाथों
कोई जा पाए भी ।'
जय जय ·· ···

(3)

छटे हुए भूसे से दाने
बीन निकाल लिए
खोशा खोशा खलिहां ज्यों त्यों
जोड़ लिया उसने
मुट्ठीभर रेज़ा संजोया
गहरी श्रद्धा से।
जय जय······

चले सुदामा मीत से मिलने
पग पग ज्यों निकले
विपता के घन तम से
धीरे धीरे धीरज से
थाम लिया था हाथ कि अब तो
मीत के अनुग्रह ने।
जय जय········

मग पर पग थे लज्जित सहमे
खोए खोए से
स्वीकारेंगे प्रभु मेरे क्या
तंदुल ये टूटे
ढरों हीरे मोती जिनके
घर वैभव बरसे ?
जय जय········

मित्रमिलन

1

अभी सुदामा नगर द्वारका
पहुंच न पाए थे
साथ रुक्मिनी बैंठे कान्हा
पल पल थे गिनते
मितवा की अगुवाई को
दोनों हो अत्सुक से।
जय जय ......

पग एक जो
प्रभु की ओर उठे
प्रभु दस पग
उस ओर आ दौड़े
वह पास पासके आ पहुंचे
वह दूर दूरसे हो जाए।
जय जय.......

2

आ निकले उस ओर से
 उत्सुक कृष्ण सुदर्शन
हुए सुदामा मितवा
 इस ओर से समर्पण
चिर - स्वप्निल था कैसा
 आपस का सम - दर्शन।

जय जय ....

अपने ही हाथों से धुलाए
 हाथ - पैर पाहुन के
कान्हा ने, जो नहीं अघाए
 मितवा के गुण गाते
चाहत का भूखा है प्रभु
 चाहे उसको जो चाहे

जय जय.........

मिला सुदामा को चिर खोया
 मितवा कुछ ऐसे
उगा रात के घटाटोप में
 सूरज हो जैसे
या पाया जंगल में खोया
 बेटा संदीपन ने।

जय जय...... ..

3

कान्ह सुदामा जी से रह रह
    पूछे बात यही
'कहाँ रहे हो मितवा
    इतनी देर, बताओ भी
कहां से आए, नैन थकाए
    बाट जोहते ही।
        जय जय.........

खेम - कुसल तुम से सुन पाते
    मिट जाती चिन्ता
आए हो तो लाए हो क्या
    भेंट मुझे मितवा
खाली हाथ कभी कोई क्या
    मिलने है आता ?
        जय जय.........

चौर की मुट्ठी बचपन में जो
    तुमने छुपाली अपनी
उसके कारण भूख न मेरी
    मिटी कभी मितवा जी
अब तो दे दो जो लाए हो
    चुक जाए ऋण भी।'
        जय जय ......

4

लेन देन से छूट नहीं रे
    कभी किसी को भी प्रभु देते
योगी हो या पौराणिक हो
    लेखा - जोखा रख ही लेते
नया नया भी वे निश्चय ही
    देते हैं पिछला चुकवा के।
        जय जय ······

जीर्ण चुनरिया - पट जो द्विज ने
    झेंप झेंप कर छिपा लिया था
ताक झाँक कर खोज खाज कर
    प्रभु ने उसको छूकर देखा
किस रुचि से टोहा, कहना क्या
    सन्त तत्व खोजे ज्यों प्रभु का।
        जय जय ·······

चौर मिले मितवा जी के
    तो कान्हा ने मनभाया पाया
'आ ब्रह्मस्तम्भ-पर्यन्तम् '
    कहते ही दो मुठ्ठी खाया
अभी उठाई ही तीजी थी
    रुक्मिनि ने जो हाथ दबाया।
        जय जय ······

पर्णकुटी ही द्वारका

(1)

चला वहाँ से द्विजवर
केवल मोक्ष ज्ञान ले
आत्मतुष्ट था तन मन
निर्मल सावधान ले
सारों का भी सार कि
खोकर ही हाथ आए ।
जय जय.........

हाथ न आई राजद्वार से
फूटी कौड़ी जो तर-कर दे
पर जीता था वही हार के ।
जय जय.........

अनुग्रह-सिक्ता हुई सुशीला
कान्ह को जिसने आराधा था
ऐश्वर्य मिले उसे अनूठा ।
जय जय.........

तर-कर : नौका की तरवाई .

(2)

देखा दूर, सुदामा जाए
उदित पूर्व से सूरज जैसे
हरी अविद्या स्वयंज्योति ने।

जय जय.........

स्वयं जिसे भगवान दयामय
अनुग्रह कर अपनाए
पर्णकुटी उसकी अपनी ही
द्वारवती बन जाए
पड़े नहीं वह कभी जगत में
देह के फेर अरे।

जय जय........

परमानन्द प्रकट कहना क्या
आप है अपना आप जानना
जान कि ज्ञानी ने जो जाना।
जय जय जय
देवकीनन्दन।

द्वारवती : द्वारका.

चिद् - विमर्श - देदीप्यमान

भगवन् हे

(राधा - स्वयंवर से)

मूल (कश्मीरी) की बानगी

गूकल ह्‌दय भ्योन
त.त्य च्योन गूर्य - वान.
च्‌.त्वे.मर्श - दिप्‌तिमान.
बगवानो

व्र.च्‌ म्यानि गूपियि
च्‌.य पत. लारान.
बन्‌सरी नाद. वाद.
भतानो

न.शरिथ हे.स्त. होश
म.शरिथ पर त. पान.
.चे.त्वे.मर्श. - दिप्‌तिमान.
बगवानो।

गोकुल हृदय मेरा

गोकुल हृदय है मेरा
यह गोचारण तेरा
चिद्‌विमर्श—देदीप्यमान है
भगवन्‌ हे।
गोपीजन हैं चित्तवृत्तियां
मेरी, जो पीछे पीछे
तेरे दौड़ें, कहा न मानें
बंसी धुन सुन बौराएं
सुध बुध खो बैठें
निज—पर का भेद
मिटा ही दें
चिद्‌विमर्श—देदीप्यमान हे
भगवन्‌ हे।

●

माया और काया

हाथ में हाथ दिए तेरे
ये रास रचाएं
व्यास और नारद भी आ
ठिठके—से रह जाएं
दासभाव से राधाकृष्ण ही
जपते जाएं

चिद्विमर्श .....हे

माया से अपनी ही
तू कणकण को व्यापे
काया में आकर भी
न्यारा रूप दिखाए
सूरज है
तो छाया भी है
बिन सूरज छाया काहे !

चिद्विमर्श .....हे

●

दर्शन – अभिलाषा

जो जैसा सुमिरे तुझको
मुख वैसा ही तू दरसाए
दरसा मुझको भी हे भगवन्
मुख अपना मुरलीवाले
कब तक बैठूं मैं आस लिए
फुर्सत इतनी किसको रे।
चिद्‌विमर्श……हे

तापस बड़े गर्व से
मन ही मन हर्षाएं
आयु हो चुकी शेष
आयु ही को ललचाएं
संशय मिटे नहीं तो
मन में मन्थन उनके।
चिद्‌विमर्श……हे

अपनाए तू जिसको
अपना आप दिखाए
रहे किनारे फिर भी
अपने को वह पाए
बन्ध - मोक्ष से छूटे
जो अनुग्रह पा जाए।
चिद्विमर्श .....है

निशिदिन परमानंद
तेरे ही दर्शन को तरसे
परम आनन्द स्वयं होकर भी
तुझ को ही ध्याए
कण - कण में व्यापे
साजन को बन बन
जा खोजे।
चिद्विमर्श - देदीप्यमान है
भगवन् है।

कृष्णजन्म

वसुदेव - देवकी तप करते थे
सन्तान तुझे ही पाएं
नंद - जसोदा अंक झुलाएं
……भगवन् हे।

मन चाहा हर कोई पाए
कर्मफलद तू कहलाए
लेनदेन के वारे - न्यारे
…… भगवन् हे।

हित आर्तों के अवतार धरे
जिसका लिया उसी को दे
चुंका चुका भी भरापुरा रे
……भगवन् हे।

जन्म लिया घर नंदगोप के
आया जग का तम हरने
यादव कुल के वंशदीप रे
……भगवन् हे।

●

राधाजन्म

'राधा' कहने की आकांक्षा
पूरी कर दुर्लभ मेरी
कि यथावत् वर्णन कर पाऊं
......भगवन् हे।

वृषभानु गोकुलग्वाला था
कुल - सम्पन्न बड़ा नामी
चाकर ग्वाल हज़ारों उसकी
धेनु दुहाते
......भगवन् हे।

धर उसके लक्ष्मी थी श्री थी
था वह भक्त मनस्वी धीर
भार्या थी सम्पदा कहाती
......भगवन् हे।

राधा जन्मी घर उनके ही
कृष्ण कृष्ण जपती रहती
मात - पिता की नैन - दुलारी
......भगवन् हे।

O

राधा : 'राधा स्वयंवर' (काव्य) का संक्षिप्त नाम.

शैशव राधा का

रत्नोदक से शिशु को नहला
हाथों हाथ लिया चुमकारा
हर्षोल्लास का कहना ही क्या
……भगवन् हे।

चन्दन के पालने झुलावें
मोती - जरे सोन - झालर
मुख देख उसका मुक्ता रो दे
……भगवन् हे।

मोह में बूड़े उसे न जानें
अंधे को क्या दिन या रात
विरला कोई जाने माने
……भगवन् हे।

नारद दूर ही ठिठका सोचे
तेज ऐसा रवि का भी क्या ?
शिव - गिरजा थे स्नेह छिरकते
……भगवन् हे।

O

महिमा राधा की

जगमाता चुस चूसे छाती

सागरजा जो कहलाती

बिटिया कह ग्वाले दुलराए

······भगवन् हे ।

नारद पत्रा लिखने बैठे

मलते ही रह गए नयन

बूझ नहीं पाऊं कुछ भी रे

······भगवन् हे ।

गर्ग - सहिता ग्रन्थ बड़ा

राधा का है चित्रण जिस में

जैसा सुना बखानूं वैसा

······भगवन् हे

राधा गायत्री सावित्री

राधा ही है सरस्वती

यहा इष्टदेवी कुल - कुल को

······भगवन् हे ।

सर्वशक्ति माने भक्त इसे

नित्य नियत पूजा करते

मां कुंडलिनी प्राण - पञ्च की

······भगवन् हे ।

O

मिलन

सतवर्षी बालाएं लाथ लिए
　　　　राधा बछड़े चारे
शैलशृंग पर खिली जुहा-सी
　　　　　　　　……भगवन् हे।

कान्हा भी बछड़े ले जाते
　　　　बरबस आंखें टकरातीं
नैनज्योति मेरी बन पाते
　　　　　　　　……भगवन् हे।

तुष्ट परस्पर नैन लड़ाएं
　　　　पहचानें भी बेगाने
लोकलाज नाते ही रूठें
　　　　　　　　……भगवन् हे।

नाचें जहाँ बाल-बालाएं
　　　　वहीं पुकारूं यौवन को
परमानन्द सुखी रह पाऊं
　　　　　　　　……भगवन् हे।

●

शिशुक्रीडा

मुरली धुन सुन बौरा उठतीं
हंसती अभी, अभी रोतीं
ग्वाल - बालिकाएं बेबस थीं
......भगवन् हे ।

होश में कोई आजाती भी
देख न पाती उन दो को
जिनसे लीला की शोभा थी
......भगवन् हे ।

प्रतिदिन स्वांग ऐसे रचती थीं
माओं से कहती भी थीं
बच्चों की बातें टल जातीं
......भगवन् हे ।

माया - मोह की करनी ऐसी
शिशु - क्रीडा समझें सब ही
ख़ाक छानतीं दूर - दूर की
......भगवन हे ।

चीरहरण

(1)

दिवस एक का लीला - वर्णन
जमुना - स्नान करें गोपीजन
कान्ह जा छिपे चुरा आभरण
······भगवन् हे।

चर बिन चोर नहीं होता रे
घर में पराया छिपा रहै
अन्तः - चोर कोई पहचाने
······भगवन् हे।

चोर न सूझे चुरा ही खोजे
दूर निकट कुछ भी न रहै
छिपे नहीं तो चोरी काहै
······भगवन् हे।

चंदन - तरु पर मुरली बजाए
दूर, आभरण दिखालाए
निरा दिखाए, दे न, छिपाए
······भगवन् हे।

कृष्णसर्प चंदन से लिपटे
हास्य विनोद करे
निर्दय आर्तों की पीर हरे
······भगवन् हे

(2)

चोर चुराया नहीं दिखाए
कौड़ी की भी छूट न दे
ज्वारी खुश है हाथ मलाए
······भगवन् हे ।

जल से कैसे नग्न निकलतीं
पत्थर - सी गहरे पैठीं
हाथ जुड़े जिह्वा गुण गाती
······भगवन् हे ।

बारबार आभरण दिखाए
फहराए खिलवाड़ करे
अभी दिखाए अभी छिपाए
······भगवन् हे ।

अकुलाईं पर उभर न आईं
ठिठुरी सी अन्दर धधकीं
रीति - नीति की दी तो दुहाई
··· भगवन् हे ।

जल में पद्म खिले खुल खेले
मैल पखारे अपने से
पल में ईश उसे निस्तारे
······भगवन् हे ।

(3)

भय तज निकलीं ही जल में से
जैसे सुन पाईं वैसे
दरस किए विधिवत् ईश्वर के
भगवन् है।

शंख चक्र गदा पद्म धरे
लक्ष्मी - सहित गरुडवाहन
नाभि - कमल पर ब्रह्मा जिसके
भगवन् है।

अनिकेतन उस एक को देखें
देख देख अनदेख करें
ब्रह्मा भी माया - भ्रम उलझें
भगवन् है।

पाप मिटे शाप उनके रीते
ताप से हिमशिल ज्यों पिघले
देखो तो निर्दोष रहीं वे
भगवन् है।

निराबरण हो हुआ आवरण
निराभरण ही वे उलसीं
दर्शन से भागा अंधापन
O भगवन् है।

विरह - व्यथा

(1)

सभी विनय करती हैं उससे
स्वीकारें आभार उसी के
ले भागा था राधा को जो
भगवन् है।

क्योंकर खो बैठीं क्या जानें
ईश्वर को वे मायामय को
देशहीन को दिशि दिशि खोजें
भगवन् है।

राधा की पगछाप टोहती
मुरलीधुन सुन सुन निकलीं
पद पकड़े हा मिटे उपाधि
भगवन् है।

प्रेमपगी आकुल बालाएं
खोज करें, पैंर पिराए
चरणधूल मुझको ठहरातीं
भगवन् है।

(2)

धूम चहूं दिश उसे न पाएं
दूर से मुरली धन सुन लें
परछाई - भ्रम से बौराएं
भगवन् है।

राधा को देखा रोती थी
पूंजी खो - बैठी, बिछुड़ी
पूछा तो कुछ बोल न पाई
भगवन् है

विलख सिसक रुंध गया गला था
अहित भला साजन कैसा
जिगर चिरा जियघाव हरा था
भगवन् है।

चलते चलते पैर पिराए
पर फूली न समाती थी
संग - संग कान्हा कंध झुकाए
भगवन् है।

●

खोज

(1)

कान्ह - प्रेयसी मैं गर्वीली
साजन पर जाऊं वारी
चकमा दे जा छिपा कहाँ री
भगवन् हे।
देशहीन का ठाँव न कोई
ॠजु सीधा जा पाता है
छोड़ ग्रह सोहं पाता है
भगवन् हे।
वन जंगल उसको जो खोजे
व्यापक सिमटे काहे से
ऋषि ईर्ष्या तज कर ही पा ले
भगवन् हे।
घूम घूम कान्हा - गुण गाएं
बेंत से फल की आस करें
चिन्तित ऊपर - नीचे खोजें
भगवन् हे।

विलप विलप जनजन से पूछें
जीवन भर दुर्लभ साथी की
बंसी धुन सुनते हो जी
भगवन् हे।

भाखा (1)

ना तुम देख्यो कृष्णा श्यामा
पिया हमारा प्यारा लोको
बाजीगर ने बाज़ी कर के
जिगर हमारा पारा लोको !

श्याम कलेवर शाम कलेजा
उसनूं कद इनसाफ हौंवदा है
पर अखियाँ भी काला हो किव
हौंवदा तेजस सारा लोको।

यह क्या आश्चर यह क्या माया
बेपरवाई इतना कितना
सैया ने किव खजाने छडके
राखा लिये उजारा लोको।

पारा : पार किया (छेदा). किव : क्यों
भाखा (गीत) परमानंद ही के शब्दों में उद्धृत हैं।
इसे कवि ने 'हिंदी ज़यव' अर्थात् हिंद की बोली जतलाया है.
(देखिए पृ० 59, 64, 92 आदि.)

पुनर्मिलन

नटनागर ऐसे में आते
देख देख फली न समाएं
प्रेमपगी न नयन पतियाएं
भगवन् हे।

किसे मनाएं, कहाँ का रूठा
ठीक वहीं पर जहाँ कि था
हंसते में याद किसको रोना
भगवन् हे।

अन्त नहीं भगवन्-माया का
कितने ही ढूंडें खोजें
पाकर भी फिर खोजें ढूंडें
भगवन् हे।

दिन दिन रात गए हाल यहीं
रात की बात ही याद किसे
रंग नया पौफट से पहले
भगवन् हे।

प्रेम घना तो हरि कणकण में
क्षण भर में माया विनसे
मैं भी परमानन्द ही खोजूं
भगवन् हे।

●

सहज ऋचा

प्रात समय दहलीज़ पै आकर
ग्वालबाल बालाएं प्रियवर
कोयल - वाणी सुना जगातीं
भगवन् हे !

हिन्दी बोली में गुण गातीं
तोता - मैना सी तुतलातीं
सहज ऋचा प्रेम की सुनातीं
भगवन् हे ।

भाखा (2)

जागो जागो श्यामा चड़ गया दिन
आओ दूद पीने जा नायो बदन
बछ गैयों को कछ लेके चल
सच गल मानो छोड़ सब बल छल
असी मानूं ताड़ी तुसी साड़ी मन।

चड़ी : चढ़ . दूद : दूध . नायो : न्हायो .
ताडी · त्वाड़ी (: तुम्हारी) . बलछल : छलबल .

भाखा (3)

असी आये त्वाडे **कने**
श्यामा **अजुद्या** नगर से
मुख ना छुपा कर रखना
कृष्णा पीताम्बर से

मुख ना...

मन में प्रीती पाया
याचक त्वाड़े आया
वाच दिया है पिया
देखोंगा अब क्या **करसे**

मुख ना...

इन्द्राज्या **भरम्यो** मन
लाग्यो सत दिन **वर्शन**
तुमने **दारा** गुवर्दन
सत दिन क्या सत **बरसे**

मुख ना...

कने : कम्ने (: पास) : अजुद्या : अजुध्या . वाच : वचन . देखोंगा : देखूंगा . करसे : करसी (: करोगे) . भरम्यो: भ्रम्यो (: भ्रम में पड़ गया) . दारा : धारा (: धारण किया) . वर्शन : वर्षण . बरसे : वर्षे : वर्ष .

लीला 2

उठो सहियो चल दें बन
कृष्ण - दर्शन कर तो लें।
मुरली - धुन सुन लो री
श्याम चले प्रातः ही
पलटा खा गया रे मन

कृष्णदर्शन...

पंकज मुखड़ा जो देखा
नैन - भ्रमर बौराया
फुलमाला बालिभूषण

कृष्णदर्शन...

श्याम पहने पीताम्बर
रवि सायं शृंगों पर
छाया के मैं अर्पण

कृष्णदर्शन...

उठो सहियो चल देंलें बन
कृष्णदर्शन कर तो लें

मूल : बो.थिवी स.खियव सरवरिवी वन......

लीला-रहस्य

अंत नहीं भगवत्-लीला का
अंत कहाँ रे माया का
संत न काहे करे सुचर्चा
भगवन् हे।

ग्वालिन कहती हैं संपदा से
बिटिया को समझाओ तो
फिरे अकेली कान्ह-संग रे
भगवन् हे।

राधा से चुपके मां बोली
'बिटिया लाज रखो माँ की
नहीं तो तात से पिटवा लूंगी'
भगवन् हे।

संपदा : वृषभानु की पत्नी का नाम.

बोली राधा

'माँ, भोली हो

कौन है किससे खेल रहा

वहां न कोई भी कान्ह बिना

भगवन् हे।

कान्ह ही ग्वालबाल - बालाएं

कौन नहीं जो कान्ह नहीं

लोग हमें यों ही लड़वाएं,'

भगवन् हे।

मुरली - नाद उठा इतने में

दूर - दूर भी निकट - निकट

बौराई मां, बिटिया पीछे

भगवन् हे।

पीछे - पीछे मुरलीधर भी

अनुग्रह - लीला यह कैसी

धन्य कि उपवन है बन में ही

भगवन् हे।

●

रास

(1)

धन धुन पर पत्थर सर घुन लें
तारे मन ही मन नाचें
तिमिर हटे लोचन सुख पाएं
भगवन् हे ।

सिवा कान्ह के कोई न दीखे
कान्ह हो कान्ह को आकर्षं
अन्य न कोई आगे पीछे
भगवन् हे ।

आप पतंगा आग न जारे
चकरा टकरा आ लपके
पर्वाना पर्वाना पा जो जाए
तो पर्वा ना रे
भगवन् हे ।

हिंदी में सन्देह मिटातीं
गुण उसके वे गाती थीं
हंसी खुशी प्रिय को सुलवातीं
भगवन् हे ।

भाखा

(4)

गैयाँ कडो प्रभ न्यारी अरे
अस किव राखों बछ ताडो अरे
ना नंद मिहर का चाकर हम
ना तुमरे साथी प्यारी अरे
बज बन में ले के राधा को
लज नाहीं तुम को यह कांरी अरे
खेल बिन तुज को कुज नाही कम
गम छोड़ा है कम्सासुरारी अरे
अज तक जो हूवा सो हूवा
अज से हो तुम हम से किनारी अरे।

बज : भग (भागकर) . कांरो : क्वांरी : तुजको : तुझ को .
कुज : कुछ . हूवा : हुआ . कमसासुरारी : कंसासुरारिः कृष्ण.

(2)

बेसुध रूठीं वे दीवानी
आपस में क्रीडा करतीं
ऐक्यामृत पी छकी छकी सी
भगवन् है।

ऐक्य में गहरे ऊबचूब हो
जो उसमें डूब ही जातीं
करें ठिठोली मौज मनातीं
भगवन् है!

कान्ह - मुरलिया - धुन पर उमगें
बनके मृग पक्षी पशु उलसें
कामधेनु बछ ग्वाले झूमें
भगवन् है।

देख देख कान्हा को चौंकें
जान जान अनजान रहें
माया सूरज पर छा जाए
भगवन् है।

खोजें सभी, न पाए कोई
उस बिन स्वयं रहे न जो
तजे तो पाए, रखे तो खो दे
भगवन् है।

(3)

एक झपक ओझल हो जाए
दसों दिशाओ से न्यारा जो
इन्द्रिय मन बुद्धि से अछूता
भगवन् हे ।

मस्त तपस्वी वहां पधारे
उलझन सुलझा संभले - से
नारद शुक ध्रु प्रह्लाद सुदामा
भगवन् हे ।

पाप देख कर कान्ह हमारे
मेटो शाप अजानों के
छमा करो अब हम हैं चेते
भगवन् हे ।

पैर थके तेरी राधा के
हमें तजो आसान नहीं
भावुक प्रभु भक्तों पर रीझें
भगवन् हे ।

ध्रु = ध्रुव (भगत).

(4)

वैररहित प्रभु धीर न खीझें
प्यार से तो उलसें रीझें
छिपा न कुछ उनसे जो रूठे
भगवन् हे ।

रह रह बिनति करें गोपीजन
गोविंद-गीत करें गायन
परमानन्द करे जो वर्णन
भगवन् हे ।

लीला 3

श्री श्यामसुन्दर मुरली - मनोहर
अजर अमर मुरारे
जानूं न ब्रह्मा विष्णु महेश्वर
अजर अमर मुरारे ।

परमानन्द आश्चर्य बखाने
ले अरमान गए सारे

अपनापन कोई परखा ले
अजर अमर मुरारे ।

श्री श्यामसुन्दर मुरली - मनोहर
अजर अमर मुरारी ।
अजर अमर मुरारे ।

मूल श्र . शाम .स्वंदर म्वरलीमनूहर···

(5)

देखा इतने में कान्ह स्वयं
कामदेव - सा कान धरे
भूल उलहने सभी पुराने
भगवन् है।

हिमसिल ढक पाए पर कब तक
उदित न जब तक हो सूरज
रोष मिटा कान्हा जो तोषा
भगवन् है।

धीरे धीरे सखियां रस में डूबी
रचने रास लगीं
राधा - कृष्ण - कृष्ण उचरती
खेलें कान्ह - सखी
भगवन् है।

मुरलीमनोहर की मुरली सुन
लीन हुई ब्रजबालाए
राधा-कृष्ण-कृष्ण जपती थीं
भगवन् है।

(6)

लीला 4

रासवृत्त में प्रेमसुधा पी
नृत्यविभोर हज़ारो बौरी
हाथ में हाथ दिए आवाहें
राधा-राधा राधा-राधा राधा-कृष्ण जी।

भक्तिभावना योग यही तो
ज्ञानध्यान अरे यही तो
व्युत्थान में समाधि - साधन जो
राधाकृष्ण जी।

पेड़ गाछ पत्थर दृग खोलें
उर भीतर के भेद टटोलें
पुरुषों सहित मुक्त गोकुल के
राधकृष्ण जी।

रास, जहां रससागर सिमटे
रास, जहां खटमिट पच जाए
रास, न पाप - लेश रह पाए
राधाकृष्ण जी।

कृष्ण एक ही

सग सभी के

रास - खिलैया

पर अगणित थे

मिथ्या नाना

सत्य कान्हा रे

राधाकृष्ण जी।

परमानन्द,

तेरी भी सुधरे

प्रेम तेरा भी

चिरधीर रहे

राधा - सरस्वती

है तोषी

राधा - राधा राधा - राधा

राधाकृष्ण जी।

कान्ह सगाई

(1)

गोकुल में संवाद पहुंचा
बाल-बालिका रास रचें
कृष्ण - राधिका अनुराग पगे
भगवन् है।

मुस्काती मधुरानन बाला
कामदेव पर रीझी रतिसी
कृष्ण-कृष्ण बोले मोहे जी
भगवन् है।

गर्गमुनि पहचान न पाए
कर्मरेख, पर धर्म के नाते
चले कि राधा जी को मांगे
भगवन् है।

(2)

बोला,
'नंद - गोप से परिचित
हैं ही; कृष्ण लाल इकलौता
प्यारा उसे भगत को हरि - सा
भगवन् है।

सार सुनें, हैं आप सरीखे
सम का रिश्ता, कहना ही क्या
पुछवा लें, मैं यों ही आया
भगवन् हे।

मेल मान लें आप, सुखी हम
राधा श्री, वह नारायण
नारायण श्री की राह देखें'
भगवन् हे।

पैर छुए संपता ने मुनि के
हाथ जोड़ वृषभानु कहे
'मुने, निवेदन छमा कीजिए
भगवन् हे।

कृष्ण नाम जो कहा, वही ना
बनबन निशिदिन जो डोले
छनछन माखन दही चुराए
भगवन् हे।

घर घर चोरी दूध उसे दें
ग्वालिन ताली-कर लें लैं
माखन रंच पै नाच नचाए'
भगवन् हे।

तालीकर : बच्चों का एक खेल जिस में गलत ताली बजने पर दंड भरना पड़ता है.

(3)

शिशु के तो अवगुण छिप जाएं
नहीं बड़े को शोभा दें
नटखट को कैसे स्वीकारें
भगवन् हें ।
सोहे दही - चोर नाभी क्या
कौन डुबो दे भिटिया को
माथा खोल न देखें माना
भगवन् है ।

(4)

परामर्श जो किया कुटुम्ब से
होश लगे उड़ने सब के
हर्षित थे फिर भी सकुचाए
भगवन् हें ।
थी उनके मुक्तामाला
अनुपम दाना दाना जिसका
राजद्वार ढूंडो मंडी क्या
भगवग् हे ।

सूझी, भेजें क्यों न इसे ही
रीत है दूना भेजें वे
भेज न पाएं एक, लजाएं
भगवन् हे।

ठहरी यही सलाह, कान्ह भी
कान लगाए बैठा था
तन मन सुन अनसुनी सी करता
भगवन् हे।

माँ जसुमति से तंदुल माँगे
नहीं तो बछड़े नहीं चरें
बोली मां,
'घूसी, सुन तो ले
भगवन् हे।

'क्वांरा है तू इसीलिए
क्यों स्वाँग रचाता है ऐसे'
उपालम्भ मीठे माँ के ये
भगवन् हे।

इतने में लौट आए पुरोहित
मोतीमाला रत्न लिए
कान्ह ने झट छीनी, ले भागा
भगवन् हे।

(4)

जसुदा अपने आप को कोसे
कान्ह को पोल न खुल जाए
नहीं चलें अब कोई बहाने
भगवन् हे।

आया, दम फूला था, पूछा
'मां मोती बोते भी हैं?
बोए मैंने, फसल समेटो'
भगवन् हे।

लोग थे व्याकुल गरज़ दिवाने
कान्ह की बातों में आए
वांछा पूरी हो, बेंत फले
भगवन् हे।

कान्ह के पीछे पीछे दौड़े
जंगल में क्या देख रहे
पेड़ भरे हैं मुक्तामणि से
भगवन् हे।

मोती देखे सबनें समेटे
नंद मिहर थे बांट रहे
पांच-तीन से नाप नाप के
भगवन् हे।

पांचतीन : 5 और 3 के अनुपात वाला वितरण.

(5)

वृषभानु के लोचन पथ पर थे
दूर पुरोहित को देखा
राज - बाज लेकर आया - सा
भगवन् हे।

मोती सोना स्वर्ग्यसम्पदा
लिए हज़ारों चाकर थे
पीछे पीछे धीरे धीरे डग भरते वे
भगवन् हे।

मन की मन ही रही, उपाय विफल
भगवद् - माया देखी
अनकह अनदेखी अनबूझी
भगवन् हे।

बोले क्या कोई पतियाए
ब्राह्मण भी अनपहचाना
आए सुशीला को सुदाम ज्यों
भगवन् हे।

नाते रिश्ते व्यूह समय के
वार्ता गर्ग - पुरोहित की
नारद जी को सकल सुनाई
भगवन् हे।

(6)

भाग्य - रेख को कौन मिटाए
अगर - मगर कब तक कब तक
होनी पर बस है किसका रे
भगवन् हे ।

पक्की बात कर गए नारद
'तत्सत्' दोनों ओर रहा
दैवविहित ही भयनाशक रे
भगवन् हे ।

कई तो शुभ दिन नछतर देखें
कई हृदय ही में पूजवें
कई माँग वर शाप नसाएं
भगवन् हे ।

कई प्रमाण विधान टटोलें
कई योग से गति पाएं
कई शुभाशुभ के फेर पड़ें
भगवन् हे ।

●

कँस-वध

(1)

काल को कोई नहीं बुलाए
किसी बहाने आ धमके
रीत है मरना किसी हेतु रे
भगवन् हे ।

अक्रूर गोकुल आकर बोले
सब ग्वालों को न्योता रे
परिवार - सहित मथुराधिप के
भगवन् हे ।

वैकुण्ठ है भगवान के रहे
नरक स्वर्ग उपहास करे
महिमा मेरी देख ले सपने
भगवन् हे ।

(2)

चिन्तित थे अक्रूर कान्ह - हित
जमुना में डुबकी लेते
देख अचम्भा हुए शाँत - से
भगवन् हे ।

जल में ब्रह्मांड सकल देखे
कान्ह में जन भी जग भी रे
इन्द्र त्रिकारण जय गाते थे
भगवन् हे ।

कोटि सूर्य सम तेज श्याम का
कंस हुआ अन्धा जिससे
कान्हा उसका काल बने रे
भगवन् हे ।

मार कंस को कारा तोड़े
वसुदेव - देवकी को मोचे
सुत के हाथों मुक्त हुए रे
भगवन् हे ।

गोकुल वृंदावन महिलाएं
जय - मंगल गाती आईं
जन्म-कुशल तुम भी गाओ तो
भगवन् हे ।

राधा–मँगल

(1)

सूर्यंचन्द्र ने किए चिरागां
बिजु ने छाता तान लिया
माया ने पालना भुलाया
(धीरे, नींद न खुल जाए)
भगवन् हे।

हवनकुंड सुलगाया बड़वानल ने
सामग्री ढेरों
चंदन - काठ तले भू पिचकी
भगवन् हे।

चन्द्रलोक तक आँच पहुंची
हिमकर का हिम भी पिघला
सफल हुई भू रस - वर्षण से
भगवन् हे।

(2)

मंगल गाए भवानी वाणी
अवहित सारे नरनारो
नहीं अघाएं सुन सुन कर भी
भगवन् हे।

मंगल गाती महिलाएं थीं
लाज - पसीनों नहलाई
रोमहर्ष - आर्द्रता सुखाती
भगवन् है।

लीला 5

राधे राधिके श्रीकृष्ण - प्रिये
हम वारी चरण तिहारे
मुरली धुन पर सब सर घुनते
काश बजाते मुरलीधर
पापभार भू पर से उतरते
हम वारी चरण तिहारे।
परमानद आशा धर भीने
करदे पारम्पार इसे
राधाकृष्ण सुने दिशिदिशि से
हम वारी चरण तिहारे।
राधे राधिके श्रीकृष्ण - प्रिये
हम वारी चरण तिहारे

●

भीने ; क्षीण हो जाए ; घुल जाए.
मूल : रादा.य रादिका.य श्र. कृष्णदा.री .

लीला 6

जय कृष्ण जय कृष्ण जय कृष्ण हें
बैठ भी जा मेरे नैनों में

जर जर भाव के मोती लाल
मुकुट तेरे बांधूं मणिमाल

होनी रचे रंगोली रे
बैठ भी जा मेरे नैनों में।

भोज पै आया तू कृपया
हेंमथाल वरभोग धरा

दाना है चखले दाना रे
बैठ भी जा मेरे नैनों में।

करना पुत्र तू पूताई
वेद कहें साकार यही

सस्ता महंगा निभा तो ले
बैठ भी आ मेरे नैनों में

वर भोग : विवाह (संस्कार) पर वर के लिए भोग
पूताई : पुत्राचार, पुत्रोचित कार्य
मूल : जय कृष्ण जय कृष्ण जय कृष्ण जय

(3)

संपता आराधे नंदगोप को
और वसुदेव को बिटिया जो
सौंपे देव को और इन्हीं को
भगवन् हे।

वृष्भानु छुए पैर सभी के
ऊंच नीच को छमियो जी
आज्ञा इनसे लें बाराती
भगवन् है।

लौट चले जब ठाठ बाठ से
राह सुने मंगल-गाने
सकुशल मथुरा वापस आए
भगवन् हे।

राधा देवकी के चरण छुए
जसुदा पहनाए माला
नंद और वसुदेव बीती भूलें
भगवन् हे।

लीला 7

सखि मंडल बीच चलो री
आओ नाचें परियां सी
आओ पूजें फूलों से
कान्हा जू नींद से जागे
अन्य को कैसे पतियाएं।

आओ नाचें

तन जोड़ी उसकी तन से
ठंडक पाई परसन से
कितनी थीं वे बौराई।

आओ नाचें

बन में नंगे पैर भटक
तपते कंकर पर धर पग
जपती थीं कान्हा प्यारे।

आओ नाचें

व्याख्या दुष्कर इस पद की
परमानंद है देखा भी
बोले तो हैं देख कई।

आओ नाचें

मूल : आरस मंज अचा.वय

अभेद

(1)

प्रिय को प्रिय की सुध जो आए
दूर रहा किस से जाए
झाँके चोरी छिपे द्वार से
भगवन् हे
आज्ञा ले कान्ह को सुलाके
चली रुक्मिनी खोई सी
देखा उत्सुक राधा आई
भगवन् हे।
रथारूढ थी, कान्ह सारथि
प्रेमामृत - प्याले भरता
पूर्णचन्द्र - सा द्युतिमय माथा
भगवन् हे।
कान्ह राधिका संग अरे, ये
सोए जो थे यहाँ कहां ?
ऊब चूब सी रुक्मिनी सोचे
भगवन् हे।

(2)

उत्सुक थी तह तक जाने को
दूध गर्म राधा को पिला
चल दी कान्ह जहां सोए थे
भगवन् हे।

लेटे थे, करवट थी वही,
चरण सहलाए हेतु नहीं
अन्य उन्हें जागृत करने का
भगवन् है।

देखा पैरों में छालें थे पड़े
बहुत सहमी, निरखी
प्रभुगति न्यारी, लीन हो गई
भगवन् हे।

पूछे, पर पूछे भी किससे
बूझ कैसे बिन पूछे
भावमुग्ध खोई खोई थी
मगवन् हें।

'ध्यान मेरा ही' बोले कान्हा,
'हिय राधा के नित्य विराजे
झुलसे वहीं चरण ये मेरे'
भगवन् है।

यह सुन रुक्मिनी हिम-सी पिघली
पार न सागर कर पाई
बीच भंवर नौका लज्जा की
भगवन् है।
चरण छू लिए भूल गई सब
नाद-बिंदु का योग सधा
ईशभक्ति की शक्ति पा गई
भगवन् है।

भाखा (5)

अपनी करनी पार उतरनी
देह धरम से जमनी-मरनी
कौन पिता और माता ब्राता
आप ही मांगत आप ही दाता
आप ही लेनी आप ही बरनी
वेदों से यह हुक्म चला है
जीवात्मा शोडशी कला है
सब देवा इस आयो शरनी
एक लख पूत सवा लख नाती
जिस रावन-गर दीवा न बाती
क्या फल पाया कमसासुर ने?

O

ब्राता : भ्राता. बरनी : भरनी· शरनी : शरण. शोडश : षोडश.
दरम. धर्म. गर : घर.

राधा का नखसिख

(1)

ईश जिसे भी दरस दिखाए
पहले दिव्य नयन दे दे
कान्ह से राधा नैन चुराए
भगवन् हे।

रात एक थी केश धो रही
झेंपी जो कान्ह ने देखी
दिशातीत ती पास सभी के
भगवन् हे।

द्वार-दरीचे वंद किए बैठी थी
द्वारिकेश - छिपी
आपा अपना अर्पण करती
भगवन् हे।

ईश - जटा से निकली क्वांरी
गंगा - सी थी नहा रही
रत्न सामने, दिखा न फिर भी
भगवन् हें।

(2)

राधा का तन सुरभित चन्दन
केश नाग लिपटे जिससे
केशव डरे न दर्श - दंश से
भगवन् हे।

स्वेद - सुसिञ्चित मुखपंकज था
आतप में मेंह सा बरसा
भक्त मुक्ति की ताक में बैठे
भगवन् हे।

माथा दिव्य प्रभात खिलाए
सफलाए योगी साधन
स्वयंज्योति धारणा धराए
भगवन् हे।

भौंह रामधनु राक्षस - घालक
जिनसे ध्वस्त कई रावण
मोहिनी सो भस्मासुर - मारण
भगवन् हे।

(3)

केश तले से उठे नयन तो
नाग सी विलखी नज़रों ने
सपना सा देखा केशव को
भगवन् हे।

पहिरावा ऐसे में कैसा
फूंक से दीपक बुझा दिया
तेज का भूषण है अंधियारा
भगवन् हे।

युक्तिमान भगवान न हारे
शेष को संकेता पग से
रत्न कई जग मग दमकाए
भगवन् हे।

छीन आभरण छिपा लिए रे
ईश्वर किसके हाथ लगे
भटके को पथ वही दिखाए
भगवन् हे।

(4)

देखा रत्न को तो हाथ मले
कान उसे कोई न धरे
वस्त्र ढूंड ले, कहीं न पाए
भगवन् हे।

भ्रमर जुही में रहें सुना है
जुही न भ्रमराधीन रहें
राधा कान्ह-लीन हो जाए
भगवन् हे।

ऐक्यमंत्र क्या ऐर-ग़ैर का
नैन को पुतलो ही भेंटे
प्रेम-तत्व क्या : दो इक होना
भगवन् हे।

हिंदी में परमानंद बोले
संदेह नहीं कहीं रहें
'वंदे' कहे मुकुंद को मन से
भगवन् हे।

भाखा (6)

बज गोविंदा बज गोविंदा
बज गोविंदा नाम
और क्या है काम श्यामा
और क्या है काम
कर कर ना कर ना कर के कर
करना का ना छोड़
मन मानी से मन ना लावो
अभिमानी से मोड़
पैर पसारो अखियां मेटो
हाथ उठा कर जोड़
संतों को प्रणाम। भज......

खावो पीवो सोवो जागो
आवो जावो पार
लावो पावो रातर-दिन में
करल्यो सब व्यवहार
परजानो उसको मानो उसके
सोंपो बारम्बार
जो है जग में राम। बज .....

बज : भज. रातर–दिन : रातदिन. परजानो : पहचानो,

स्वयंवर-दक्षणा

माया विष्णु की कोई न जाने
खोजें तनमन लोग जिसे
शक्तिरूप हरि ही मायाए
भगवन् हे।
आ बैठा है भीतर मेरे
वर्णन सब यह वही करे
उस बिन सूझे किसे कि वर्णे
भगवन् हे।
नया पुराना दैव लुनावे
अहंहीन को भी बुझावे
पथ खो आगे पीछे दौड़े
भगवन् हे।
स्वयंवर - दक्षणा समेटूं
स्वयं तीर्थ में स्नान करूं
यमभय को मैं दूर भगा दूं
भगवन् हे।
परमानन्द परम - आनंद पाए
अरमाँ सारे हूं पूरे
माँ राधा है पिता कान्ह रे
भगवन् हे।

स्वयं – तीर्थ : १. (कश्मीर में) स्वयंभू नाम का तीर्थ; २. आध्यात्मिक तीर्थ.

सती - संदेह

(1)

गर्वहीन रुक्मिनि नारद से
पूछे रीति, नारद बोले
सुन सच कुंदन सी बन जाए
भगवन् हे।

नारद जी दृष्टांत सुनाए
राम को बन में भिजवाए
जल थल सीता - खोज कराएं
भगवन् है।

शिव से बोली सती एक दिन
'हाय मुझे बोध ही नहीं
बुद्धिभेद है तत्व न सूझे
भगवन् हे।

हे शिव, केशव राम एक हैं
वेदों में जिनकी चर्चा
वही राम सीता को रोता?'
भगवन् हे।

(2)

देवी स्वयं परख करने हित
सीता - वेष बना पहुंची
'सिय सिय' रटते राम जहाँ थे
भगवन् हे ।
दूर से मुख दिखला सियपति ने
पूछा — 'जगदम्बे, सीता
मेरी कहीं नहीं देखी क्या ?'
भगवन् हे ।
'ओ माँ' चीख उठी, घटना
अवमान की याद आई कोई
जुड़े न शब्द उमा पूछे क्या
भगवन् हे ।
लज्जित हो मन ही मन चेती
राम स्वयं हैं नारायण
नारायण सीता को खोजें
भगवन् हे ।
'शिव शिव' करती घबराई - सी
हरमुख पर प्रिय - पास गई
'राम राम' प्रभु उधर पुकारें
भगवन् हे ।
परमानंद अब विस्तारेंगे
देवी - गर्व - विमर्दन को
गिरिजा क्योंकर जान पै खेली
भगवन् हे ।

हरमुख : (कश्मीर का) एक पर्वत शिखर (दे० पृ. 125 भी)

सच्चिदानन्द विज्ञान-रवे

(शिवलग्न से)

मूल (कश्मीरी) की बानगी

रसपूर्ण. परम.

सदाशिवा.

सत् - चित् - आनंद.

विज्ञान - रवा.

अमरेश्वर. चित् - अंबु-शिला

अमरावती ह्यथ पूर्गकला

पीयूष पिय.

ईश.

किं न पिवा.

सत् - चित् - आनंद.

विज्ञान - रवा.

मंगल

रसमय परम सदाशिव हे
सच्चिदानन्द विज्ञान - रवे ।

अमरेश्वर चिद् - अम्बु - शिला
अमरावतिका पूर्णकला

पीयूष बहा
पियूं न क्या ?

सच्चिदानन्द विज्ञान - रवे ।

कुम्भक - भजन करूं तेरा
सागर मेरे गागर आ
वाणी दे गुण गाऊंगा

सच्चिदानन्द विज्ञान - रवे ।
रसमय परम सदाशिव हे ।

राम - सती संवाद

कुम्भज - घर संवाद हुआ
योगभरा विज्ञानभरा
अन्तर्मुख - चिद् - अनुभव का।
सच्चिदानंद ··

सत्संकल्पा सती सहित
धीरे धीरे तू प्रस्थित
पहुंचा राम जहां विचलित।
सच्चिदानन्द···

प्रणत दूर से देख तुझे
'सच्चिदानंद भोले' बोले
राम, सहज गिरिजा चौंके।
सच्चिदानन्द···

'सिये सिये' जन सम विलपें
स्वामिन्, स्वामी आपके
परमात्मा हैं राघव ये?
● सच्चिदानन्द··

सती - व्यथा

(1)

शंकाकुल हो सीतामुख
विमुख वहां आई सम्मुख
गिरिजा शंका निवारणे।
सच्चिदानन्द...

'सिय समझे, तो राम नहीं
जिस बिन है विश्राम नहीं
नहीं तो क्या वेदोक्त यही ?'
सच्चिदानंद ..

बोले राम कि 'निर्जन में
कहीं न नारीव्रत डोले
पड़ें न लेने के देने।'
सच्चिदानंद...

सीता मुख : सीता के भेस में.

(2)

लज्जित, आई ईश - शरण
'भाग्य - लिखा कैसा भगवन्
किसे सुनाऊं, आई बन ?'
सच्चिदानंद...

करके आगे मृगछाला
'बैठो जी सीता हो न'
गिरिजा से शंकर बोला।
सच्चिदानंद...

लज्जाकुल सोचे गिरिजा
यहीं बैठ पछताऊं क्या
शरणूं जिनका दूध पिया।
सच्चिदानंद...

कोप पुराना फिर उबला
शिव ने सुन अनुसना किया
विषबीज से अंकुर फूटा।
सच्चिदानंद...

दक्षिण जा पहुंचो गिरिजा
मैंकेवाले सोचे हा,
बिना बुलाए आई क्या?'
सच्चिदानंद...

(3)

भड़क उठी फिर से ज्वाला
अपने ही को राख बना
क्षत पर निंदा - क्षार पड़ा।
सच्चिदानंद...

मां और बहन उलाहन दें
सास - ननद ससुराल रहें
जीवित सब, किसको रोएं।
सच्चिदानंद...

छिन्नभिन्न सो हाथ मले
लाज - भंवर में फिर उलझे
हाथ - पैर तैरी भूले।
सच्चिदानंद...

'हाय रे उत्सव पर आना
आजा नहीं तो ले ही जा
भैरव, ले स्वाहा मेरा।'
सच्चिदानंद ..

●

आत्माहुति

(1)

रवि - कुंड में शशि जा कूदा
जुड़ी अधिष्ठान से शाखा
सिद्धों ही का अंत ऐसा।
सच्चिदानन्द···

पंचभूत की हविष पड़ी
'ज्वाला' ज्वलन - शिखा जिसकी
'राज्ञा' कलश - फुहार बनी।
सच्चिदानंद···

मेल अपने ही आप से
खेल अहो भगवान के
सोना कुंदन बन निकले।
सच्चिदानन्द···

भूतनाथ कोपित—फूंफूं
'तहसनहस दक्षिण कर दूं
मूल न कोंपल ही छोड़ूं।'
सच्चिदानंद···

त्रास से हर के सहसा ही
दक्षिण की धरती डोली
शंकु हिला कांपी छत भी।
सच्चिदानंद···

अधिष्ठान : मुंड. ज्वाला : ज्वाला देवी (जिसका तीर्थ खिव में है).
राज्ञा : राज्ञी देवी (जिसका तीर्थ चीरभवानी में है).
शंकु : नींव का पत्थर

मैना - सी जो मीनवती
घर उसके जन्मी देवी
तेज से जिसके भू दमकी।
सच्चिदानंद ··

मन की मन ही मन रखती
'शिव शिव' जप निज को तजतो
प्रेमानल - जोत जगी - सो।
सच्चिदानंद···

निशि दिन व्याकुल
खोई सी
बाट जोहती
होनो की
सिद्ध - प्रलोभन से
न भ्रमी।
सच्चिदानंद ··

प्रेमपरीक्षा

(1)

सप्तर्षि उधर से आ निकले
प्रेम की उसके थाह लेने
भोले का अपजस गा गा के।

सच्चिदानंद···

भूतिराज वह भयावना
सोहे उसे नहीं सुरमा
भैरव है री मसान का।

सच्चिदानंद···

दर्शन दे जी दहलाए
तन नंगा लज्जित कर दे
हार कपालों का पहने।

सच्चिदानंद ···

सर्प जनेऊ डाल गलो
परिचित गुरुजन का तेरे
बैस में कम है न किसी से।

सच्चिदानंद···

राजकुमारी तू नग की
राजवधू बन ही जाती
राजे जग के शेष अभी।
सच्चिदानंद···

है तू जिसकी मतवाली
धूसर तन वह चर्मढकी
भंग आ चरस का सौदाई।
सच्चिदानंद···

नहीं है मणि सोना चांदी
तप से वप को जला नहीं
बन जा वधू नरेश - सुत की।
सच्चिदानंद...

घर न उसे, कोई खोजे
भेजोगी किसको किसके
अतापता ही नहीं मिले।
सच्चिदानंद...

(2)

गिरिजा बोली, ऋषि हो जी
देशकाल की रीत यही
पर समझो भी बात सही।

सच्चिदानंद··

राह दिखाओ लोगों को
नहीं न राह से भटका दो
बुरा लगे भी सच सुन लो।

सच्चिदानंद··

संत हो तो बर दे ही दो
शिव वरलें मुझको तोषो
प्यार उनका मोहे सब को।

सच्चिदानंद···

बोले ऋषि सुनकर, 'बाले,
हम हैं कैलास से आए
जहाँ तेरा शिव तुझे स्मरे।

सच्चिदानंद···

प्रीति परस्पर तेरी उसकी
नहीं अभी की, बहुत पुरानी
दूर दूर भी निकट निकट ही।'

सच्चिदानंद···

वर की खोज

(1)

चाहे उसे उसे जो चाहे
चाहे जिसे वही पा जाए
भजे उसी को चाह-साह से।
सच्चिदानंद···

नगपति नगरानी बातों में
बिटिया के मंगल की सोचें
ब्याह योग्य है, वर तो खोजें
सच्चिदानंद···

'वर-घर प्यारा मिल जाए
जोन्ह हमारी रवि पाए
तन मन न्यौछावर कीजे।'
सच्चिदानंद···

(2)

चला पुरोहित शुभ क्षण पर
सकुशल घर से सजधज कर
गिरिजा सुन दौड़ी बाहर।

सच्चिदानद ..

'द्विजवर तुझे सिखाना क्या
प्रारब्ध है अपना अपना
दैव लुनाए जो बोया।

सच्चिदानद ..

उत्तर दिक् में वर मेरा
एक है योगीश्वर मेरा
दौड़ वहीं तू जा रे जा।

सच्चिदानंद ..

मान कहा, हित है तेरे
दौड़ वहीं जा, तज फेरे
कैलासेश्वर वर मेरे।

सच्चिदानंद...

(3)

'वहां दिखे जो सार वही
वहीं ठहर तज दर ब दरी
हार वह मुक्ताहारों की।

सच्चिदानंद ··

वहां स्फटिक - घर मुक्ताधृत
वहीं दैव मेरा आदृत
वहीं तपस्वी शिव स्वीकृत।

सच्चिदानंद···

वहां शिशिर का शीशमहल
ईश्वर का वैभव सुविमल
मुक्तामणि धन है पुष्कल।

सच्चिदानंद···

ललचाया ऋतुराज उधर
देख मनोहर हिम - प्रस्तर
रवि शशि इन्द्र वहां चाकर।

सच्चिदानंद···

ढूंढें शरण वसन्त शरद्
मीत वहां वे नहीं द्विषद्
देव - दनुज हैं वहाँ विमद।'

सच्चिदानंद···

(4)

गरज रही नभ - नद देखो
नाग दिखे डस लें न कहीं
चढ़ते - उतरते ग्राह भरी।

सच्चिदानंद ··

'उफ ये राजकन्या - झाँसे
झाड़ ग्रौर कांटे ग्रौर रोड़े
वेष है चिथड़ा, पैर घिसे।'

सच्चिदानंद...

एक गुसाईं ग्राया नज़र
महा जती सिंहासन पर
मुकुट - जटा मणि - ग्रग्नि - शिखर

सच्चिदानंद···

थर्राया ग्रा गिरे ग्ररे
ग्रश्मखड़ पर पीठ धरे
होंठ चाट जिह्वा काटे।

सच्चिदानंद···

(5)

गोसाईं बोला, 'काहे
आया जहां न बच पाए
आस - उजारे के मारे ?'
सच्चिदानंद...

बात सुनाई नगपति की
सुना जुही से भी गोरी
ब्याही है जाने वाली।
सच्चिदानंद...

व्यर्थ गई शेख़ी उसकी
चारा क्या सहनी ही पड़ी
दिखे न एक निशानी भी।
सच्चिदानंद...

सिवा न तेरे कोई क्या
इस बन में, जो उसे रुचा
हाय किधर मैं आ भटका।'
सच्चिदानंद...

(6)

विनय मुसाईं जी ने की
'अनुग्रह करना मुझ पर जी
बात बनाना मेरी ही।
सच्चिदानंद...

माता और पिता जी को
राजकन्या के समझा दो
काम आऊंगा मैं भी तो।'
सच्चिदानंद...

ब्राह्मण बोला—

'कहना क्या ?
कहाँ धतूरा, जुही कहाँ
देख व्यथित होगी बिटिया।
सच्चिदानंद...

गोसाईं सच हा कहना
सपना राजकन्या का क्या
ढक तो ले पिछवाड़ अपना।
सच्चिदानंद ..

साथ धूल का दर्पण का
पत्थर में से तेल भला ?
आग और पानी, मेल कहाँ।
सच्चिदानंद ..

(7)

गोसाईं बोला—

'नादां,
तू क्या जाने मेल भला
कर्मों का जोड़ा रिश्ता।
सच्चिदानंद...

धूल और दर्पण मेल न क्या ?
नहीं नया रिश्ता इनका
आग ही से पानी उपजा।'
सच्चिदानंद...

(बोला द्विज) 'हो ऐसा अगर
बन आए मुझ पर तुझ पर
तू इक, पर मेरे हैं घर।'
सच्चिदानंद...

शिव ने भंग-कुट दण्ड उठा
ब्रह्मण को रह रह पीटा
हाथ पैर से बरी किया।
सच्चिदानंद...

भंग – कुट - दण्ड : भांग कूटने (और घोटने) का डंडा . बरी : मुक्त .

(8)

बोला—

‘कोप न कर जोगी
खातिर यह अभ्यागत की
लाज तो रख दाढ़ी की भी।
सच्चिदानंद…

जोगी निज घर पहुंचा दे
बिछुड़ा हूं मैं अपनों से
लुटा चुराहे पर हूं रे।’
सच्चिदानंद…

बोला—

‘ठहरो सब्र करो
देख ही लोगे अपनों को
बन्धु - सहित सुख ही समझो।
सच्चिदानंद…

लो मुट्ठी - भर कोयले ये
सोने से भी हैं महंगे
धन होता, जन आ जाते।’
सच्चिदानंद…

(9)

द्विज ने डर अपनी झोली
कोयलों से भर दी पूरी
सविनय शिव ने विदा कही।
सच्चिदानंद...

हिम-आँधी, की बात गई
मार पीट की आहों की
घर की ध्वनि ज्यों कान पड़ी।
सच्चिदानंद...

जाते फेंक दिए कोयले
बिना नज़र डाले पीछे
पहुंचा घर शंकित मन से।
सच्चिदानंद...

झाड़ी जो द्विज ने झोली
सोने की कनियाँ दमकीं
धूल आ गिरी जगमग-सी।
सच्चिदानंद...

कोयला हो गया, खो सोना।
'हाय न पूरा ला पाया
सोन-कोयला ज्ञात न था!'
सचिचदानद...

(10)

राजा रानी पैंर पड़े
दरस दिया ज्यों ईश्वर ने
कहने क्या इस दर्शन के।

सच्चिदानंद ··

घबराया ब्राह्मण बोला,
'भाग्यवती है नगकन्या
राजघराना है वर का।

सच्चिदानंद ··

राजपुत्र का कहना क्या
बिटिया - मैना का तोता
सम्मुख उसके रवि फीका।

सच्चिदानंद···

द्विजवर कुछ दिन छिपा रहा
सुनो कि विधि का करना क्या
एक दिवस नारद आया।

सच्चिदानंद···

' फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशा
वर - यात्रा होगी शिव की
तयारी अब कर लो जी।'

सच्चिदानंद ··

(11)

गंगा आई नहलाने
ऋतुए भी पद्म बिछाने
आपस में एका करके ।
सच्चिदानंद···

चहल पहल थी नगर बड़ी
श्वेत जो दाढ़ी दुल्हे की
दिखी, बधाई भो रोई ।
सच्चिदानंद···

'ठहरे होते ज़रा अभी
मसें ज़रा लगतीं भीगी
चाल दुढ़ापे की कैसो ?'
सच्चिदानंद··

पर बिटिया मां से बोली
'सावधान, उपदेश यही
अनुभूति यही अनुग्रह की ।
सच्चिदानंद···

खुल कर मां कह दूं कैसे
पौफट में अंधिया न मुझे
रवि तम चीर स्वयं दमके ।'
सच्चिदानंद···

प्रेम - साधना

श्रेय प्रेम ही इधर उधर
प्रेय प्रेम ही इधर उधर
प्यारा प्रेम प्यार पाकर।

सच्चिदानंद…

जगती उलसे प्रेम से
नस - नस सरसे प्रेम से
परम आनंद रे प्रेम से।

सच्चिदानंद…

श्रद्धाफल दें देव हमें
वही लुनाएं जो बोएं
परमानंद प्यार बो दें।

सच्चिदानंद विज्ञानरवे।

○

फुटकर

मूल की बानगी

1 ब.ड्य वे.चा़र व्यवहार दितमो
2 कुलिस त. छा़यि ओस य.च़काल न्याय
3 मथर पर शेव. शम्भू
4 अमर पानो ब्रम सम्सार छ़य
5 अनपेखित प्रावनावतम परमानंदमय मनस
6 तीव्र. वा.रागुक खास. सञ्ज़ार छुय
7 षम्पोश बागस मंज़ वथरावय
8 कर्मबूमिकायि दिज़ि दर्मुक वल
9 पाँ.च. त्रे.य. बागलिस करारदादस
10 डेशन छे. सायंय सु परम - आनंद
11 त्राहि माम् त्राहे पाहे मुरारी
12 कासि यम. बय. चोन प्रेयम त लोलो
13 ओं भूर्भुव: स्व: शिवशम्भू
14 गिंदुना छु ज़िंद. मरुन
15 तस कुस मरे त सु कस मरे
16 केशव. छे.तिकोश. मत. मंद.छावतम
17 यी छुख त ती छुख

दीनाक्रन्दन

बडे विचार व्यवहार दे दो
भवसर - भंवर से पार करो।
श्रीकृष्ण हे विष्णु नारायण,
कब से हेर रहा पथ मन। ...
अर्जा क्या, ले आया क्या ?
कफ पित वात पियास तृषा।...
अन्धा तुम्हारा हूं पकड़ो
गर्त तुम्हारा डूबूं जो।
कौन किसी का? आस बुझी
सूरदास हूं तो तुम्हारा ही।...
देखो न कुकृत मेरा जो
देखो अपनी क्षमता को!
कौन उसका जो न किसी का
सुन तो लो अनाथ का दुखड़ा।...

तरुछाया - झगड़ा

(1)

तरु - छाया का चिर झगड़ा
रवि से माँगें निपटारा ।

छाया :

'तरु वैरी ने हा
आड़ से आंखों को रोका ।
काश कि घर में रवि देखूँ
क्षण भर टिक भी तो पाऊं ।'

पेड :

'शरण ले लो मेरी
बच पाओ अन्यथा नहीं ।
रवि - दर्शन की चाह जो हो
कहां रहोगी स्वयं कहो ?
मैं बन कर हो जाओ लीन
रवि - सम्मुख काहे हो दीन ?
आप रहो, तो परमात्मा
स्वयं गलो, तो ज्ञान वृथा ।'

(2)

सुन कर छाया लजाई
तरु बिन भी कुछ करूं सही।
तरु-झुमुंट रवि देखा तो
होंट भिगोने लगी अहो।
जाना: विधि रवि-दर्शन की
तरु बिन नहीं, गिरह सुलझी।
तरु-चरणों में पड़ी रही
लीन हुई चूं चरां न की।
रवि क्या, तत सत् स्वरूप है
है, पर अप्रकट रूप है।
निरंजन निर्गुण औं निराकार
सब से परे भी सर्वाधार।
तरु (: कुल) ही है जुज़्व-ओ-कुल
माटी ही से रंगीन गुल।
तरु-आश्रय जो छांव रही
सुलझ गई
सुलझूं मैं भी।

●

कुल : कश्मारी में पेड़.
जुज़्व-ओ कुल ; जुज़्व (भाग) और कुल (सकल).

अमरनाथ-लीला

स्थिर मन से पूजो प्रभु को

(1)

'शिव शम्भो' मत्र उचारो
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

मन - पीठ देहगुहा अन्दर
सत् चिद् आनंद लिंग जहां अमर
लोग कहें कैलास - शिखर
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

'त्राहि मां' यात्रारम्भ करो
'हर - मुख' में आपा वर लो
गुहा वहां अन्दर - बाहर
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

ऊपर - ऊपर चले चलो
दूर न भटको निकट बढ़ो
सद्गति ही की बात सुनो
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

हरमुख : हरमुख नाम का महादेवगिरि जो कश्मीर का एक प्रसिद्ध शैव तीर्थ है ; २. हर मुख (प्रत्येक रूप).

ऊपर ऊपर : १. श्रीनगर से अमरनाथ (तीर्थ) की ओर
२. मूलाधार (चक्र) से ब्रह्मरंध्र की ओर
३. मूर्त से अमूर्त तक (साकार से निराकार की ओर).

(2)

तीर्थ रहित है पग भी क्या
वेदों ने ओंकार कहा
जीवन्मुक्त परम आत्मा
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

लीला यह अमरनाथ की
देहद्वार शांत - एकांत की
शम - दम - गुहा प्रशाँत की
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

गुफा से अपनी गुहा चलो
तज अन्य देवी - देवों को
व्यर्थ नहीं ये बभूत - डले
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

नामरूप - शिवशक्ति बनो
अर्थ स्वयं बूझो समझो
परमानंद जीवन्त रहो
स्थिर मन से पूजो प्रभु को।

O

गुफा . : अमरनाथ तीर्थ की गुहा . बभूत अमरावती (नदी) में पाई जाने वाली सफेद (गच) माटी .

अधिकार

अमरात्मा रे
भ्रम यह संसार है
आदिदेव होने का
तुझ अधिकार है
नेह - सिंधु - सेतु यह
इन्द्रिय - द्वार है

पार जो हो गए
उनका उद्धार है
देह को शांत कर
देह दरकार है

दशवर्षी पर्व
तू मना दशहार
आदिदेव होने का
तुझे अधिकार है
तुझे अधिकार है।

दशहार : (कुंभ की तरह का) एक मेला जो हर दस बरस बाद शार्दीपुर में स्थित 'कश्मीरा प्रयाग' नाम के संगम पर लगता है।

(आदिदेव होने का / बनने का अधिकार अर्थगंभीर है.)

तेरे कर भक्ति के

मोतियों का हार है
आप अपने गले
डाल, इख़्तियार है।
किसका इन्कार है
किसका इक़रार है
तू है मुख़्तार रे
तू है मुख़्तार।

आदिदेव बनने का
तुझे अधिकार है
तुझे अधिकार है।

शक्तिपात के शहर का
तू सूबेदार है
धर्म—अर्थ—काम—मोक्ष
पर भी इख़्तियार है।

यही सरकार है जी
यही सर्वकार है
कर ले दरबार तू
करले दरबार।

आदिदेव बनने का
तुझे अधिकार है
तुझे अधिकार है।

परमानंद तू भी
दुनियादार है
लोक सामान्य ही
तेरा व्यवहार है ।

देने वाला स्वयं
एक त्रिभुवनसार है
सर्व अधिकार है
सर्व अधिकार ।

आदिदेव बनने का
तुझे अधिकार है
तुझे अधिकार है ।

अमगात्मा रे
भ्रम यह संसार है
आदिदेव होने का
तुझे अधिकार है ।

●

एक पांडुलिपि में यह छंद कृष्ण राजदान के नाम से यों दर्ज है : 'कृष्ण नाव व्योमुत दुनियादार छुय' (कृष्ण, नाम तेरा पड़ा दुनियादार है।) संभवत: यही ठीक है।

अनुग्रह

अनपेक्षित अनुभव हो
    परम - आनंद मुझ को
प्रिय न उस बिन
कुछ लगे तो
अनुग्रह है जानो।

ब्रह्मनिर्वाण बाह्य अन्तर
    शब्द - ज्योतिर्मय है
टेढ़ी मेढ़ी
श्रुतियों में
शोध कर
        निर्णय है।

टीस रग - रग में उठे तो
    प्यार - मंज़िल तय है
प्रिय न उस बिन
    कुछ लगे तो
अनुग्रह है जानो।

●

शांत शालामार

तीव्र वैराग्य का
चारु सब्ज़ज़ार है
रह के बेलाग
देखने का
अधिकार है

बोल रहा
'शिव शिव'
स्वयं आबशार है

शांत शालामार है
शांत शालामार है
रह के बेलाग
देखने का
अधिकार है।

●

पद्म-कुंज में

पद्मकुंज में सेज सजा लूं
दुख दर्द निवेदूं अपना।

बुलबुल, कौए
कह दो उससे
अछवल उपवन
आ मिल ले
लक्षनाम को
सौध में सेवूं
दुख दर्द निवेदूं अपना।

द्वादशदल - अन्तर है निर्मल
वृषवाहन हे
आगम - बाह्य अलक्ष्य अमर हे
अनहद - मंडल
सजधज कर लूं
दुख दर्द निवेदूं अपना।

लक्षनाम : परमेश्वर जिसके लाखों नाम हैं.

सहस्रदल सीस नवाऊं
गुरुवाक्य से
पथ दर्शा दे
ब्रह्मरंध्र - मंदिर
बिछवा दूँ
दुख दर्द निवेदूँ अपना।
पा निःश्रेयस
परमानंदा
गुरुमुख धारण कर
सोऽहम्
न्यारा मान - अवमान
से रहूं
दुख दर्द निवेदूं अपना।

पद्मकुंज में सेज सजा लं
दुख दर्द निवेदूं अपना।

कर्मभूमिका

कर्मभू को धर्म से बल दे
बो संतोष, आनन्द उगे।

निशिदिन जोड़ी प्राणों की
हाँक ले कुम्भक-कोड़े से
होश, न परती कहीं रहे
बो संतोष, आनन्द उगे।

मधुरुत दो दिन का यौवन
व्यर्थ न बीते कोई क्षण
बीज अचिर-शोभन बो दे
बो संतोष आनन्द उगे।

हाली मालिक को फल दे
जागीरदार वंचित न रहे
बाक़ी-फ़ाज़िल किस खाते
बो संतोष, आनन्द उगे।

परमानंद भूस्वामी था
आज़ाद हुआ कर्ज़ चुका
पर-आश्रय-पीर मिटी रे
बो संतोष, आनन्द उगे।

O

वादे से ज़्यादा कम क्या

पांच - तीन - भागी बंमें धन
वादे से ज़्यादा - कम क्या ।

परती नई नई तू कर्षे
चुकें पुराने ऋण तेरे
जोत स्वयं, मत खोज महारे
वादे से ज़्यादा कम क्या ।

टूक टूक कर किश्र - शस्त्र को
घड़वाले हल नए नए
सब्र धौंकनी धुक धुक फूंके
वादे से ज़्यादा कम क्या ।

निर्मलता पहचान मुक्त को
श्रद्धा थोड़ी नन्द ही की
दुखड़ा सुन ले सुनरे दुहाई
वादे से ज़्यादा कम क्या ।

काश वहाब अब सुन के पसीजे
घाव का मरहम दे ही दे
दे दें जिसे बुलाया जाए
वादे से ज़्यादा कम क्या ।

O

नंद : नन्दराम : परमानन्द का असली नाम .

वहाब : वहाबखार नाम का सूफ़ी कवि जिसके कहे पर ठेठ (किसानी) कश्मीरी में यह रचना उमड़ आई ।

परम आनन्द

देखें हैं सब परम आनन्द
तरस रहा पर परमानन्द।

संग संग जो रहे संग उसके
पाए कैसे अहं रहे
पाले जो गिनती भूले
तरस रहा पर परमानन्द।

पाया जो खोया सा था
देखा, हृदयामृत छलका
झेंपे ज्यों दीन सुदामा
तरस रहा पर परमानन्द

मानें सब विरला जाने
दिशि दिशि दरस उसी का रे
हिंद में हिंद, सिंध में सिंध रे
तरस रहा पर परमानन्द।

मात्र कथन से नहीं मिले
आपा सौंपे बिन न बने
परमानन्द है परम आनन्द
तरस रहा पर परमानन्द।

O

पाहि मुरारी

त्राहि माँ त्राहि
पाहि मुरारी
संकट काट मुकुटधारी।

जन्म जन्म में
आ - जा - घनतम
घट में घट आकार धरा
हूं आकाश
घटूं या बढ़ूं क्या
संकट काट मुकुटधारी।
पापभार तिरछा, गठ ढीले

भेड़ पीठ धर घाट चलूं
राह दूर
इन्द्रिय ठग टोहें
संकट काट मुकुटधारी।

दाना बो दूं ख़ोशा ले लूं
भूल हुई, क्यों चुप कैसो
रोटी काहे
घराट न पीसे
संकट काट मुकुटधारी।

घर बैठे ही
आह पिटा क्यों
कभी नहीं अकड़ा था मैं
नहीं तो
ज्यादा ही पिट जाता
संकट काट मुकुटधारी।

ज्यों त्यों
भवसर से पार तो कर
क्या जानूँ उकताया हूं
सीधे मांगा
सीधे दे भी
संकट काट मुकुटधारी।

'परमानंद स्मर'
छूटेगा
कमर कसे तैयार रहे
होंट तेरे हैं
निर्बल के भी
संकट काट मुकुटधारी।

त्राहि माँ त्राहि पाहि मुरारी
संकट काट मुकुटधारी।

सोऽहं-बोध

प्रेम तेरा यमभय को निवारे
जीना मरना आना जाना
भ्रम है भ्रम है रे।
प्रेम तेरा ··

नित्य नियम - आचरण
कराए भक्ति तेरी
मन - घोड़े की बाग
थमाए भक्ति तेरी

सहज को रग रग में
दौड़ाए भक्ति तेरी
आगम के अनुभव से
अनुग्रह जाग उठे।
प्रेम तेरा···

आठ सिद्धियाँ पीछा कर लें
सीधा देखे भी
हुआ जो इनके लिए पराया
साया देखे भी
बिन उसके जो पर से पर है
अपना देखे भी
शम - दम - शाँत - एकाँत
उसे कुछ दे पाए।
प्रेम तेरा···

ज्ञेय न कुछ भी रह जाए
उस का अज्ञान नशे
छूटे स्वाद अस्वाद से
सलवण - अलवण बान नशे
जाप्य न कुछ भी रह पाए
उसका आख्यान नशे
सुखदुख ऐसे में
क्या जान पड़े
सत्यव्रत कहलाए।

प्रेम तेरा···

त्रासकाल का क्षणक्षण सारा
कन कन भूले तो
तज मरने की शंकाकुलता
भीषण भूले तो
वर्ण और आश्रम से बढ़ आगे
परिव्राजन भूले तो
एक मात्र है लक्ष्य
बोध सोऽहँ का
साधे तो।

प्रेम तेरा यमभय को निवारे
जीना मरना आना जाना
भ्रम है भ्रम है रे।

●

अजपालहरी

ॐ भूर्भुवः स्वः शिवशम्भो
अजपा गायत्री सोऽहं सो।

कृति और अर्थ नहीं हैं दो
कब तक भिन्न रहें सोचो
स्वतः वही है छुआ कि जो
अजपा गायत्री सोऽहं सो।

करथ से उठो अरथ चढ़ो
क्रेंकनदी तट बरथ चढ़ो
यात्रा है स्वयँभू की लो
अजपा गायत्री सोऽहं सो।

परम आनंद परमानँद हो
द्वैत तजो बंधमोक्ष तजो
मरना कैसा अमर जो हो
अजपा गायत्री सोऽहं सो।

●

करथ, बरथ, क्रेंकनद और स्वयंभू :
गंगाबल यात्रा से संबद्ध तीर्थों के नाम हैं

सहज-विचार

खेल है जीते जी मरना
सहज विचार यही करना।
बिना अहं स्वयं स्मरना
सहज विचार यही करना।

सब कुछ ही जिसमें व्यापे
आप वहाँ ठहरे कैसे
भगवन् ऐसा दर्शन दे
सहज विचार यही करना।

नव हैं द्वार अटरिया के
चारों ओर है मन दौड़े
रंध्र रंध्र को बँद कर दे
सहज विचार यही करना।

मन्दिर में जाओ तो सही
अन्दर उसके घिरो नहीं
आर पार हैं काहन ही
सहज विचार यहो करना ।

खोल दरीचे माया के
जित चाहे उत तू दौड़े
उस बिन क्या जो पले पड़े
सहज विचार यही करना।

लल्ला बोली दुलराना
है इकलौता ही ललुआ
रे पहचान, न हो अंधा
सहज विचार यही करना।

आत्मा को चाहे जो रे
सहज को पाए श्रद्धा से
शमदम काम नहीं आए
सहज विचार यही करना।

परमानन्द को आकांक्षा
कान्ह पै वारी हो जाना
क्या वसन्त फिर क्या जाड़ा
सहज विचार यही करना।

खेल है जीते जी मरना
सहज विचार यही करना।

●

सहज - साधना

कौन मरे रे किसे मरे
जीते जी ही सहजाए।

सालिक घर का मालिक रे
डोली नैया घाट उसके
भवसर पार उतर जाए
जीते जी हो सहजाए।

मरने को तैयार रहे
यमकिंकर से नहीं डरे
घिने किसे रे रुचे किसे
जीते जा ही सहजाए।

आया भूले कटुमधु रे
तूफ़ानों में डटा रहे
आप ही अपने से उघरे
जीते जी ही सहजाए।

चरणकमल सर धरने दे
परमानन्द पर तू रीझे
अज्ञ कहीं अपमृत न मरे
जोते जी ही सहजाए।

कौन मरे रे किसे मरे।

विनय

श्वेत केश की लाज तो रखियो
ईश्वर - गति निज दिखलाम्रो ।

यौवन बीता मत तरसाम्रो
दौड़ धूप से पाया क्या
लोक हंसाई से तो छुड़ाम्रो
ईश्वर- गति निज दिखलाम्रो ।

पर्वत चढ़ना है, न डराम्रो
चढ़ूं उतर पाऊँ कैसे
सोच से अपनी राह लगाम्रो
ईश्वर - गति निज दिखलाम्रो ।

तनमन सहज - नीर धुलवाम्रो
जी खिल पाए सरसिज सा
मिटे मरण - भय धर न धंसाम्रो
ईश्वर गति निज दिखलाम्रो ।

श्वेत केश की लाज तो रखियो
ईश्वर - गति निज दिखलाम्रो ।

●

आत्मविलास

जो हो, वहो हो
हो नहीं दृश्य
कोइ जो चीन्हे

निज का उजाला
आप अपने
नैनों न सूझे

वह देखना क्या
जो न दृष्टा को
देख पाए
जो हो वही हो।

जो हो, रहो सो
छोड़ अभ्यास
अंधापन रे

निज का बसेरा
ले न दिक्काल के
बंधन रे

स्वधर्म-चर्या
वर्ण आश्रम
सन्यासन रे
जो हो रहो सो।

O

सूक्ति मुक्तावली

अन्य को अन्य नहीं खोजे रे
अहित भला साजन कैसा

अहंकार अति अँधियाए
अज्ञता अपनी प्रकट न रहती

आप बिना आप न उधरे
आप अपने से ही उधरे

अन्ध को क्या दिन क्या रात
करनहार है आप ही हर जू
काल पूछ कर प्राण न लेता
किसे मिले किसका अधिकार
कोई नहीं वहां नहीं जो
कौन उसका जो न किसी का
कौन कह सका भेद किसी स
कौन नहीं जो कान्ह नहीं
कौन मरे रे किसे मरे
खाली हाथों मैत्री कैसी
खाली हाथों कभी कोई क्या किसी के हाँ आता।
खेल रे जीते जी मरना

घट टूटे आकाश न टूटे
घर में भी वनवासी ही

चर बिन चार नहीं होता रे
चाहत का भूखा है प्रभु
चाहे उसको जो चाहे
चाहे उसे उसे जो चाहे
छिपे नहीं तो चोरी काहे
छोड़ अहं सोहं पा जाए

जले विराग ही से राग - गहन
जीते जी ही सहजाए

जो हो रहो सो
जू होकर भी हज्व सहै

जेब का खोए जिसे नहीं दे
ठिठ्रे बाहर अन्दर धधके

तजे सो पाए रखे सो खो दे
दाना बो दूं ख़ोशा ले लूं

दिशातीत तो पास सभी के
दूर दूर भी, निकट निकट हो

देशहीन का ठांव न कोई
धन्य कि उपवन है वन ही में

नयनहीन को दीप से क्या
नया पुराना दैब लुनावे

नाना नामरूप नहीं नाना
निज का उजाला आप अपने नैनों न सूझे

पर्वाना जो पर्वाना पा जाए तो पर्वा ना रे
पूँजी उन की बंट बंट कर भी भरी - पुरी

प्यारा प्रेम प्यार पाकर
बढ़ई का ठकठक बस्ते में बन्द रहे कब तक रे

बिन पहचाने कहा न जाए
भाग्य लुनाए जो बोया

मन धरता में चला पवन - हल
मां कुण्डलिनी प्राण - पञ्च की

राम न अन्य और शिव दूजा
वह दूर दूर से हो जाए
वह पास पास के आजाए
शक्ति - रूप हरि मायाए

शरद् की ठिठुरन में फूल खिले
सागर मेरे गागर आ

सुनते हैं चोरों के पीछे गठकतरे
सूरज भी है छाया भी है, बिन सूरज छाया काहे

स्वाद एक दाने गुच्छे का
संचित नहीं अभागे का

हित आर्तों के अवतार धरे
होनी पर बस है किसका रे
हंसते में याद किसको रोना

●

परिशिष्ठ 1

रचना - परिचय

1. **सुदाम-चरित** : परमानन्द का यह सर्वप्रथम लीलाकाव्य भागवत के दशमस्कन्द पर आधारित ता है, पर वर्णन और चित्रण की दृष्टि से स्वतन्त्र है। इसका परिवेश चिरपरिचित होते हुए भी चिरनवीन लगता है। काई ढाई सौ पृष्ठों के इस काव्य में कृष्ण की बाललोला; ग्वालिनों की जसोदा से शिकायत, मीत सुदामा का दुराव - छिपाव, विपदाग्रस्त जीवन, संकोच, मीत की याद, अनुग्रह, मित्र - मिलन और स्वरूपाँतरण की कहानी मूलतः एक मनोरम रूपक के अन्दर समो दी गई है। रूपक भी ऐसा कि आरोपित नहीं जान पड़ता, सहज ही खुल पड़ता है सुदामा के परिचय - निर्देश से :

'मीत सुदामा जीव था प्यारा नारायण का' (पृष्ठ 26)

सुदामा जीवात्मा है, कृष्ण परमात्मा। दुराव - छिपाव से ही जीव परमात्मा से दूर हो जाता है और परमात्मा का अनुग्रह पाकर ही जी। फिर से खुल पड़ता है, निःसंकोच हो जाता है, सहज बन जाता है। तभी तो उसकी अपनो **पर्णकुटी** ही द्वारका बन जाती है। (पृष्ट 38)

इस प्रकार रूपक के आध्यात्मिक चौखटे के अन्दर रह कर भी यह काव्य गृहस्थ - जीवन के (सामाजिक) यथार्थ से अनुप्राणित है और अवस्थानुकूल चित्रण द्वारा पाठक का मन मोह लेता है। रूपक को भी ऐसा निभाया गया है कि जीवात्मा और परमात्मा के सहज संबंध की स्वाभाविक व्यंजना में कहीं व्याघात नहीं आने दिया, न ही आध्यात्मिक प्रतिरूप को अरुचिकर या उकताऊ होने दिया है।

साहिब कौल के तथाकथित कृष्णावतार में जो कृष्णसुदामा प्रसंग है उससे यह लीलाकाव्य बहुत उत्कृष्ट है क्योंकि वहाँ आख्यान और प्रगीत का ऐसा सामंजस्य नहीं, न ही वस्तुवर्णन में चित्रण और उद्भावन का ऐसा तालमेल है।

2. **राधास्वयंवर :** रचनाक्रम की दृष्टि से परमानन्द का यह दूसरा लीलाकाव्य भी दशमस्कन्द ही पर आधारित है। गर्गसंहिता को इसका स्रोत बता कर कवि ने वास्तव में भागवतपुराण के हवाले की ही ओर संकेत किया है। कोई 1400 छन्दों के इस बड़े काव्य की उद्भावना भी एक अध्यात्मरूपक के ही तौर को गई है। प्रस्तादना में इसका आह्लादक निर्देश हुआ है :

'गोकुल हृदय है मेरा यह गोचारण तेरा
चिद्विमर्श - देदीप्यमान है भगवन हे।' (पृ० 41)

हृदय ही गोकुल है, चित्तवृत्तियां ही ग्वाल - बालाएं हैं, जो बँसी की टेर सुन कर आपे से बाहिर हो जाती हैं, सुधबुध खो बैठती हैं। चिद्विमर्श से परमार्थ दमक उठता है और सहजभाव आलोकित हो जाता है। (प्रत्यभिज्ञादर्शन के 'प्रकाश - विमर्श' की कितनी कलात्मक परिणति है!) चित्तवृत्ति की पहली अंगड़ाई से लेकर सहजानुभूति के चरम उन्मेष तक रासलीला जारी रहती है। रासलीला में राधा और कृष्ण का परिचय घनिष्ट हो जाने के पश्चात् ही राधा का स्वयंवर चरितार्थ हो जाता है। परिणीता रुक्मिणी के साथ रहते हुए भी कृष्ण राधा को भूल नहीं पाता। राधा ने उसे अपने हृदय में समेट जो रखा है। रुक्मिणी ने राधा को उबलता हुआ दूध पिलाया तो कान्हा के पैर झुलस गए (पृ० 87)। अभेद की कितनी मनोरम अभिव्यक्ति है।

वैसे भी यह काव्य अध्यात्म के घेरे में ही यथार्थ चित्रण की अनोखी बहार दिखाता है। कृष्ण और राधा का जन्म, गोचारण करते हुए आंखें चार हो जाना, किशोरानुराग का घातप्रतिघात, चुहल, नोक-झोंक, बनलीला, मुरली का जादू, रासक्रीडा, चीरहरण राधा की मां का लोकापवाद से घबराकर बिटिया को झिड़कना, पर मुरली-धुन सुनते ही बेटी से पहले दौड़ पड़ना, राधा की सगाई, कृष्ण का चाँचल्य (मोती का हार लेकर भाग जाना), राधा-मंगल, राधा और रुक्मिणी का सामंजस्य, भगवल्लीला का रास-रहस्य, राधा का नखशिख (केशस्नान) आदि प्रसंग एक से एक मनोहर हैं और एक दूसरे को मनोहरता में हाथ बटाते नज़र आते हैं। वस्तुवर्णन और भावचित्रण का उल्लसित सामजस्य इस लीलाकाव्य की एक उत्कृष्ट विशेषता है जो साहिब कौल के कृष्णावतार में बिल्कुल नहीं मिलती।

रचना-कौशल के जादू का एक ही नमूना लीजिए। लोकापवाद से घबराई माँ राधा को टोकती है:

"राधा से चुपके मां बोली, 'बिटिया लाज रखो माँ की' ......
बोली राधा, 'मां भोली हो, कौन है किस से खेल रहा
वहां न कोई कान्ह विना।'
मुरलीनाद उठा इतने में दूर-दूर भी निकट-निकट
बौराई माँ, बिटिया पीछे।"

कितनी प्यारी विडम्बना है कि मुरली की टेर सुनते ही मां पहले दौड़ पड़ी और बिटिया पीछे पीछे चल दी। (पृ० 62-63)

3 **शिवलग्न** : परमानन्द का यह तीसरा लीलाकाव्य उस पौराणिक सामग्री पर आधारित है जो पार्वती - परिणय से सम्बन्ध रखती है। इस में भी कवि ने लौकिक जीवन के तारों पर अध्यात्म का दिव्य संगीत छेड़ा है। शिव-शक्ति के एक बार बिछड़ कर फिर से एक हो जाने की बात ही तो शिवलग्न की उपलब्धि है। 'रसपूर्ण परम सदाशिव सच्चिदानँद विज्ञानरत्रि' का कृपाकिरण से हो तो 'चिद् - अम्बु - शिला' (अमरनाथ गुफा का शिवलिंग : जीव की चेतना) पिघल उठती है और ऐक्यानुभूति का अमृत बहाती है।

काव्य का कलेवर 280 छन्दों के आस पास है और कथ्य की दृष्टि से कुछ फूला फूला दिखता है। रचना - कौशल की भी इसमें वह तीव्रता नहीं पाई जाती जो पहले दो काव्यों की विशेषता है, फिर भी कवि ने आख्यान के जाने पहचाने घटनाक्रम का बहुत कलापूर्ण उपयोग किया है। कथावस्तु शैव आगमों की परिपाटी में शिव - सती-संवाद से शुरू होकर रामसती संवाद की पष्ठभूमि पर आगे बढ़ती हैं और सामाजिक यथार्थ को समेटता हुई प्रसंग को विश्वसनीय और रोचक बनाती हैं। 'वर की खोज' प्रकरण में पार्वती - पुरोहितसंवाद, पुरोहित की कैलास - यात्रा, शिव - वरयात्रा, आदि प्रसंग बहुत जानदार हैं और इन्हे जानदार बनाने में स्थानीय रंग और महक के औचित्य का काफ़ी योगदान हैं। परन्तु ऐसा लगता है कि इस काव्य को समेटते समय परमानन्द की काव्यप्रतिभा कुछ ऊंघने लगी थी। हाँ काव्य की संगीतमयता में कोई अन्तर नहीं आया हैं।

4 **फुटकर** : परमानन्द की छोटी रचनाओं में, जैसा कि वर्गीकरण में बताया जा चुका है, आराधन, विनय, भक्तिभाव, विवेक, अनुप्रेरण उपदेश, अभिवादन, दीनाक्रँदन आदि की अभिव्यक्ति हुई है! इनमें से केवल दो पर टिप्पणी की आवश्यकता है।

(1) **अमरनाथ (यात्रा) लीला :** लगभग 60 छन्दों की इस रचना में परमानंद ने अमरनाथ - यात्रा का रूपक बाँध कर षट्चक्रों और तीर्थों का समीकरण किया हैं। श्रीनगर के गणपतयार (घाट) से लेकर अमरनाथ की गुहा तक और वापसी पर अन्य कई तीर्थों की यात्रा करने का महत्त्व जताकर कवि पुनः देह - गुहा के अन्दर 'सच्चिदानन्द लिंग' की **सहजाराधना** पर ज़ोर देता हैं :

'गुफा से अपनी गुहा चलो'। (पृ० 127)

आरम्भ भी तो इसी से कराया था :

'मन - पीठ देह - गुहा अन्दर
सत् - चिद् - आनन्द लिंग जहाँ अजर
लोग कहें कैलास - शिखर।' (पृ. 126)

(2) **कर्मभूमिका :** 21 छन्दों वाली इस रचना में कृषि के परिवेश से रूपक गूंथ कर कवि ने कर्मयोग की महिमा गाई है। प्राणापान के बैलों को दिनरात कुम्भक के कोड़े मारते हुए कर्मभू को कृषि के योग्य बना कर इसमें धर्म की खाद डालने की बात अर्थगंभीर होते हुए भी सुबोध है। इस लीला की एक विशेषता सामंती संस्कार के सामाजिक चिंतन की सीमास्वीकृति है जि । की ओर भूमिका में इशारा किया जा चुका हैं। (पृ० 9)

अन्त में रचनाचातुर्य की सृजनात्मक ताज़गी के परमानंदी स्पर्श की इन रेखाओं पर ध्यान तो दीजिए :

1. सतवर्षी बालाएं साथ लिए, राधा बछड़े चारे
शैलशृंग पर खिली जुही - सी……

कान्हा भी वछ ले आ जाते. बरबस आँखें टकरातीं
तुष्ट परस्पर नैन लड़ाएं, पहचाने भी अनजाने
लोक - लाज नाते ही रूठें। (पृ० 49)

2. यह सुन रुक्मिनी हिम सी पिघली, पार न सागर कर पाई।
बीच भंवर नौका लज्जा की। (पृ० 88)

3. ईश - जटा से निकली क्वाँरी, गगा सी थी नहा रही
स्वेद - सुसिंचित मुख - पंकज था, आतप में मेंह सा बरसा··
राधा का तन सुरभित चंदन, केशनाग लिपटे जिससे
भौंह रामधनु राक्षस - घालक, जिससे ध्वस्त कई रावण··
केश - तले से उठे नयन तो, नागसी विलखी नज़रों ने
सपना सा देखा केशव को। पृ० (81—91)

4 (सतो) छिन्न भिन्न सी हाथ मले; लाज भंवर में फिर उलझे
हाथ पैर तैरी भूले। (पृ० 103)

5. 'द्विजवर, तुझे सिखाना क्या, प्रारब्ध है अपना अपना
दैव लुनाए जो बोया।

उत्तरदिक् में वर मेरा एक है योगीश्वर मेरा
दौड़ वहीं तू जा रे जा।

ललचाया ऋतुराज उधर देख मनोहर हिम - प्रस्तर। (पृ० 110)

परिशिष्ट २

शीर्षकावली

परिशिष्ठ ३

परमानंद की रचनाओं के संस्करण

1, सुदाम—चरित्र (सं० : पृथ्वीनाथ कौल बामज़ाई)
विशीनाथ प्रेस, श्रीनगर ; 1921 (?)

2. ज्ञान - प्रकाश (प्र० : निरंजन नाथ रैणा),
कश्मीर मर्कन्टाइल प्रस, श्रीनगर ; तृ० सं० 1949

3. परमानंद-सूक्ति-सार (सं० : मास्टर जिन्द कौल)
भाग 1—3 , 1941, 1942, 1958

4. परमानद (सं० : प्रो० श्रीकण्ठ तोषख़ानी)
कल्चरल एकेडेमी, श्रीनगर; 1960

5. परमानंद (स० : पृथ्वीनाथ मधुप)
(कविश्रोमाला) रा० भा० प्र० स०, वर्धा ; 1962

6. परमानंद (स० : जयलाल कौल , मोतीलाल साक़ो),
कल्चरल एकेडेमो श्रोनगर; भाग 1— 1972

7. परमानंद (सं० : मोतीलाल साकी), कलचरल एकेडमी, श्रीनगर; भाग 2-3 ; 1973—

Talk of with O.N. Shastri 8-8-02

Matri — 16 matrika —

8 Asht peeth —

Devi peeth —
- Trilammula – Ragina
- Parbat – Sharda
- Kulgam – Kulgangi
- Khrew – Zala
- Khanbaraman — Tripura

1889 Census

Kashap — 6 Gotra —
- Dalatreya
- Upmanyu
- Bhardwaj

133 (+127) — 5,50,016

[illegible]